भारतीय साहित्य के निर्माता

दुरसा आढ़ा

रावत सारस्वत

साहित्य अकादेमी

Durasa Aadha A monograph by Rawat Saraswat on the Rajasthani author Sahitya Akademi, New Delhi (1983), Rs 4

साहित्य अकादमी

प्रथम सस्करण 1983

साहित्य अकादेमी

प्रधान कार्यालय
रवी द्र भवन 35, फीरोजशाह रोड नई दिल्ली 110001

क्षेत्रीय कार्यालय
ब्लाक V-बी, रवी द्र सरोवर स्टेडियम, कलकत्ता 700029

29, एल्डाम्स रोड (द्वितीय मजिल), तेनामपट, मद्रास 600018

172, मुम्बइ मराठी ग्र थ सग्रहालय माग, दादर, बम्बई 400014

मूल्य
चार रुपये

मुद्रक
सजय प्रिटस,
दिल्ली 110032

विपय-क्रम

अध्याय 1

जीवन-परिचय

मध्ययुगीन राजस्थानी साहित्य मे चारण कवियो की एक लम्बी और गौरवपूर्ण परम्परा रही है। ये लोग अपनी सशक्त काव्य क्षमता और प्रतिभा से क्षत्रियोचित गुणो को प्रोत्साहित करते थे। स्फूर्ति और प्रेरणा से ओतप्रोत अपने काव्य का स्वय ओजस्वी वाणी मे पाठ कर ये वीरो मे जैसे नए प्राण फूक देते थे। कलम के धनी इन कवियो ने अनेक युद्धो मे स्वय तलवार चलाकर आदर्शो के लिए मर मिटने की अमूर्त भावना को साकार किया था। कथनी और करनी का यह अपूर्व सामजस्य उन्होने चरितार्थ करके दिखाया था। देशभाषा मे कहे गए चारण कवियो के वे गीत कवित्त राजस्थानी साहित्य की अमूल्य धरोहर है। ऐसे ही स्वनामधन्य कवि पुगवो मे अग्रगण्य थे, अपने समय के सर्वाधिक यशस्वी और अद्भुत प्रतिभासम्पन्न कवि, दुरसा आढा।

चिरकाल से भारतीय कवियो और लेखको मे एक ऐसी विनयपूर्ण भावना रही है जिसने उन्हे स्वय के विषय मे विशेष ज्ञातव्य प्रस्तुत करने से वंजित किया है। यही कारण है कि हम अपने महानतम कवियो लेखको के व्यक्तिगत जीवन के विषय मे उनकी रचनाओ से कुछ नही जान पाते। वाल्मीकि, पाणिनि भास, कालिदास, तुलसी, सूर आदि सभी महान लेखको ने इस विषय मे मौन ही रखा है। इसी परम्परा का निर्वाह करते हुए राजस्थानी कवियो ने भी अपनी रचनाओ मे अपने व्यक्तिगत जीवन के विषय मे कुछ भी नही लिखा है। ऐसी स्थिति मे जो कुछ उन लेखको के विषय मे मौखिक परम्परा से ज्ञात होता है उसी के आधार पर सुधीजनो ने उनके इतिवृत्त सकलित करने की चेष्टायें की हैं।

राजस्थान के चारण लेखको के विषय मे ऐसा ही एक प्रयत्न राजस्थान के ख्यातिप्राप्त इतिहासकार एव साहित्यप्रेमी स्व० मुशी देवीप्रसाद ने किया था। चारण जाति के अपने क्षेत्रो मे भी इस प्रकार की मौखिक परम्परा रहती आई है पर उन्हे लिपिबद्ध करने की कोई सुनियोजित नीति पहले कभी नही अपनाई गई। आधुनिक युग मे साहित्य के शोध छात्रों तथा पत्र पत्रिकाओ मे लेखको सपादको ने

इस दिशा मे कुछ प्रयत्न किए है जिनसे अनेक कवियो के परिचय प्रकाश मे आए है। जहा तक दुरसा आढा के जीवन परिचय का प्रश्न है इनके विषय मे सवश्री मोतीलाल मेनारिया, हीरालाल माहेश्वरी, सीताराम लाळस, मोहनलाल जिज्ञासु आदि साहित्य के इतिहास लेखको ने प्रकाश डाला है। इनके अतिरिक्त गुजरात के श्री शकरदान जेठीभाई दथा तथा मुशी देवीप्रसाद न विस्तारपूवक सामग्री प्रस्तुत की है। स्फुट रूप मे अनेक अन्य प्रयत्न भी हुए हैं। इसी सामग्री के आधार पर दुरसाजी का जीवन वत्त यहा प्रस्तुत किया जा रहा है।

दुरसा का पूरा नाम दुरसाणद था, यह बात बहुत कम लोग जानते है। चारणा म करमाणद, आणद, बीझाणद, आदि नाम दुरसा के पूववर्ती हैं। नाम करण की भारतीय शली म रामानद, घनानद, विवेकानद, सहजानद, ओमानद, परमानद आदि नाम है ही। इस नाम का उल्लेख कलकत्ता स्थित 'रायल एसियाटिक सोसाइटी आफ बगाल' के हस्तलिखित ग्रथ सग्रह की प्रति सख्या सी० 23 22 म प्रतिलिपित "दूहा सोलकी वीरमदेजीरा" म इस प्रकार उपलब्ध है दूहा सोलकी वीरमदेजीरा आढा दुरसाणद रा कहीया—"। पर इस नाम का प्रचलन अ यत्र देखने मे नही आया, और समूचे साहित्य म ये 'दुरसोजी' या 'दुरसाजी के नाम स ही जाने जात है।

आढा चारणा की एक शाखा है जिसका नामकरण उनके मूल निवास, भूत पूव जोधपुर राज्य के मालानी परगने के गाव 'आढा, के कारण हुआ। पर 'चारण जाति के विषय म निणयात्मक रूप स कुछ नही कहा जा सकता। अनेक प्रकार की पौराणिक देवोत्पत्ति विषयक दतकथाआ का साराश यही लिया जा सकता है कि चारण लाग स्तुतिपाठक या विरुदगायक ही रहे थे। "चारयन्ति कीर्तिम इति चारणा" यह व्युत्पत्ति प्राय चारणो को भी मान्य है। स्तुति पाठको के रूप मे चारणो के वणन भारतीय साहित्य म बहुश प्राप्त हैं। सम्राट हषवधन के सम्बध म महाकवि बाणभट्ट द्वारा लिखित 'हषचरित' नामक ग्रथ मे इनका उल्लेख आता है। बाण न कहा है कि राज्यश्री के विवाह म दूर-दूर से आए हुए चारणो का मातका-पूजन की कोठरी मे ठहराया गया था। य लोग सम्राट के आगे पीछे स्तुतिगान करते हुए चल रह थ। "दूर-दूर से आए हुए' उल्लेख से यह आभास होता है कि सभवत ये लाग गुजरात राजस्थान जसे सुदूर प्रदेशा स कन्नौज पहुचे हा।

एक पौराणिक मान्यता के अनुसार पहिले चारण लाग गधमादन पवत पर रहत थे तथा बाद मे राजा पृथु के काल म स्तुतिगायन के फलस्वरूप इन्ह 'तलग देश' यज्ञ की दक्षिणा म दिया गया। उक्त देश म पर्याप्त समय तक रहकर य लोग सिंध म जा बसे जहा पास ही म इनकी आराध्यदेवी हिंगलाज का स्थान है। सिंध स यह जाति काठियावाड और गुजरात, तथा राजस्थान और मालवा म

फनी। शेष भारत म अयत्र द्वारा यही उल्लेख याद म प्राप्त नही होता। इनकी प्रमुख शाखायें काछेले (कच्छ म रहन क कारण), मारू (मारवाड म बसने के कारण), सोरठिया (सौराष्ट्र म निवास करन स) तथा तुम्बेल (?) कही जाती है।

चारण लाग शक्त तो वष्णव ही है पर कतिपय चारण महिलाओ को व शक्ति के अवतार क रूप म मानत एव पूजते आए है। सिंध म मामड' नामक चारण क घर सात कयाओ ने ज म लिया बताते है जिनम स एक आवड हिंगलाज देवी का अवतार मानी जाती है। इन देविया के रूप सौन्दय से आसक्त हाकर तत्कालीन सिंध नरेश न इनके साथ विवाह करना चाहा, जिसस य सिंध छोडकर चली गइ। 'आवड और सबस छोटी लख्वी' चारण समाज म बड भक्ति भाव स पूजी गइ। कालान्तर म देवी-अवतारो के इस क्रम म बीकानेर के पास 'देशनोक' नामक स्थान पर 'करणी' नामक देवी हुई जिसने बीकानेर के संस्थापक राव बीका' का राज्य प्राप्ति म सहायता की। करणी देवी के मंदिर प्रदश म अनेक स्थानो पर हैं, तथा राजपूत एव चारण समाज म इनकी बडी मान्यता है। राजपूत एव चारण परस्पर अभिवादन करते समय 'जय माताजी की' कहकर देवी को सम्मान देत हैं। देवी-अवतारो का यह क्रम अब भी चालू है। इन्द्रबाई तथा सायरबाई नामक चारण देविया इसी युग की है।

यद्यपि काव्य रचना को चारणो न व्यवसाय के रूप म ही ग्रहण कर लिया था, पर इतिहास मे चारणो द्वारा गो पालन तथा घोडो की खरीद बिक्री का काय किये जाने के दृष्टात मिलत हैं। कृषि काय भी इनका ध धा रहा है। इनकी वेष भूषा से यह स्पष्ट प्रकट होता है कि ये अवश्य ही भारत के उत्तर पश्चिमी भू भाग म ही सवप्रथम आकर बसे और वही से दो शाखाओ के रूप मे गुजरात और राजस्थान मे आए। इनकी उप शाखाओ म सौदा, आढा, झूला, रतनू गाडण, बीठू, लाळस, देथा, दधवाडिया, सादू खिडिया, कविया, आसिया, टापरिया, सामोर, पाल्हावत, मीसण आदि अनेक प्रसिद्ध कविवृन्द हुए है। 'बारठ इनकी सम्मानसूचक पदवी है, जिसकी व्युत्पत्ति "द्वार पर विवाहादि अवसरो पर 'त्याग के लिए हठ" करने के प्रसग से की जाती है। पर द्वारभट्टो की पुरानी परम्परा ही सभवत अधिक समीचीन है। पोळपात (प्रतोली पात्र), कविराजा, गढ़वी आदि अ य अनेक नामो से भी इन्हे सबोधित किया जाता है।

चारणो के समान ही भट्टो रावो ब्रह्मभट्टो कविरावो का एक समाज भी काव्य रचना म कुशल समझा गया है। ये लोग भी स्तुतिपाठक ही है। सभवत, चारणो से पूव ही ये लोग बिरुदगायको के रूप म प्रतिष्ठित हो गए थ। तेरहवी शताब्दी मे चारणो के नामोल्लेख जिन पुरातन प्रबधो म मिलते हैं वहा ब्रह्मभट्ट, द्वारभट्ट, बभ, आदि नामो से इन कवियो की रचनायें भी प्राप्त होती हैं। प्रतीत होता है कि उत्तर अपभ्रश काल म बिरुदगायको के वर्गों म स

शौरसेनी अपभ्रंश का सहारा लेकर 'पिंगल' नामक काव्य भाषा म रचनायें चालू रखी, तथा शेष न आभीर अपभ्रंश की बहुलता के साथ डिंगल' नामकरण कर अपनी स्वतत्र भाषा का उद्घोष किया। डिंगल' का नामकरण विद्वानो के बहुमत के अनुसार पिंगल' के अनुकरण पर ही हुआ, पर दोनो काव्य भाषाओ मे मात्र शलीगत ही अ तर नही था, अपितु भाषागत पार्थक्य भी पर्याप्त था। पिंगल और डिंगल के इस द्वन्द्व के पीछे भटटो और चारणो के व्यावसायिक स्वार्थ ही अधिक थ। ये दोना वग लम्बे अर्से तक एक दूसरे को नीचा दिखाने के प्रयत्न करते रहे। पर काला तर मे सामजस्य हा गया और दोनों ही वग दोनो ही भाषाओ मे रचनायें करन लगे। चारणा और उनकी भाषा डिंगल' का पलडा निश्चय ही भारी रहा। पर यह ध्यान देन योग्य है कि चारण विद्वानो के रचित अवतार चरित्र', 'प्रवीण सागर 'वीरविनोद आदि सुप्रसिद्ध ग्रथ पिंगल मे ही लिखे गए जबकि वशभास्कर' जसे अतिप्रसिद्ध ग्रथ म भी 'पिंगल' का खुलकर प्रयोग किया गया। इस व्यावसायिक स्पर्धा का प्रारभ सभवत सोलहवा शताब्दी मे अथवा इससे भी पूव ही हा गया था। यह भी समव है कि भटट 'चदवरदाई' के विख्यात 'पथ्वीराज रासो' के बाद ही चारणा न इस स्पर्धा का प्रारभ कर दिया हो।

राजस्थानी साहित्य म चारणो की देन गीत' और 'ख्यात' के रूप मे ही विशेष रही है। 'गीत' वीरो को प्रेरित करने का काव्यगत प्रयत्न था, तो 'ख्यात उनके वश गौरव का प्रेरणास्पद इतिवृत्त। ख्यात प्राय गद्य मे लिखी जाने लगी थीं। गीत और ख्यात के प्रसग मे चारणो के काव्य को हेय समझने का आग्रह करने हुए नवी शताब्दी मे अनघराघव' नाटक के कर्ता मुरारि कवि का एक सुभाषित, हरि कवि द्वारा सकलित 'सुभाषित हारावली' मे मिलता है जिसम कहा गया है कि 'वाल्मीकि जैसे सस्कृत कवियों से ही 'राम' को यश प्राप्त हुआ, इसलिए हे राजन चारणो के गीतो-ख्यातो से लुब्ध होकर प्रात स्मरणीय सस्कृत कवियो की अवगणना मत करो'—

चर्चाभिश्चारणाना क्षितिरमणपरा प्राप्य समोद लीला,
मा कीर्ति सौविदल्लानवगणय कविव्रातवाणी विलासान्।
गीत ख्यात च नाम्ना किमपि रघुपतेरद्ययावत्प्रसादात
वाल्मीकेरव धात्री, धवलयति यशोमुद्रया रामभद्र ॥

इस उल्लेख से प्रतीत होता है कि चारणा की तत्कालीन रचनायें अब नष्ट हो गई हैं और अप्राप्य हैं। यद्यपि गीत, दोहे आदि तो बारहवी-तरहवी शताब्दी से ही मिलने लगत हैं, पर ख्यातें तो सतरहवी से पहिले की हो नहीं मिलती हैं। प्रसिद्ध चारण ख्यात-लेखकों में 'आसिया बाकीदास' तथा 'सिढायच दयालदास' के नाम उल्लेखनीय हैं।

गीनकार के रूप म विख्यात दुरसाजी का ज म सवत 1592 (सन 1535 ई०) मे तत्कालीन मारवाड के 'धूदला' गाव म हुआ बतात है। कई लोग सवत 1595 (सन् 1538 ई०) भी मानते है। इनकी मा 'ध नीबाई' 'बोगसा'शाखा के चारण गोवि द' की बहिन थी। दुरसा के दादा 'अमराजी के पिता और दादा के नाम क्रमश 'खूमाजी' और 'भीमाजी' थे। अमरा के दो पुत्रो—'मेहोजी' और 'कानोजी मे मेहोजी दुरसा के पिता थे। एक किवदं ती के अनुसार एक वष अकाल म राज्य का कामदार इनके गाव मे अनाज खरीदने आया, जो किसी तकरार के कारण कानोजी क हाथ से मारा गया। इस पर राज्य के कोप से डर कर मेहोजी तथा कानोजी गाव छोडकर परगने मोजत के गाव 'धूदला' मे आ बसे थे। मेहोजी तो यही रह गए तथा कानोजी तत्कालीन आमेर राज्य के गाव उगियारा मे बस गए। एक मा यता के अनुसार मेहोजी ने अत्यधिक निधनता के कारण स यास ले लिया और दुरसा की माता ने ही कठिन परिश्रम करके इनका पालन पोषण किया।

कहा जाता है कि दुरसा के ज म के समय, जब पुत्रोत्सव का प्रतीक 'थाल' बजाया जा रहा था, तो गुजरात से दिल्ली को जाते एक मौलवी उधर से गुजरे, और उ होने उस सायत को शुभ देखकर दुरसा के भाग्यशाली होने की भविष्य वाणी की।

माना जाता है कि बाल्यकाल म दुरसाजी एक 'सीरवी किसान के यहा नौकर थे। एक दिन उस किसान ने, सिचाई करते समय नाले की मिट्टी बह जाने के कारण, दुरसा को मिट्टी के स्थान पर लिटा दिया और सिंचाई करने लगा। उसी समय समीपवर्ती ठिकान 'बगडी के ठाकुर उधर आ निकले और वे दुरसा को अपने साथ लिवा ले गए, तथा उनकी शिक्षा का प्रबध किया। 'सूडा शाखा के इस राजपूत ठाकुर ने दुरसा का होनहार जानकर मारवाड के राव 'मालदेव' से मिलाया। राव मालदेव के प्रभावित होने पर ठाकुर न 'धूदला' गाव का पटटा उनके नाम करवा दिया। दुरसा न उक्त ठाकुर के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए निम्न सोरठा कहा है—

माय मावीताह, जनम तणो कयावर जिता।
सूडो सुर पाताह पाळणहार प्रतापसी॥

अर्थात्, मेरे माता पिता ने मुझे ज म देकर जो उपकार किया है वसा ही प्रतापसिह सूडा ने मेरा पालन पोषण करके किया है।

मुशी देवीप्रसाद का मानना है कि राव मालदेव के समय बगडी के ठाकुर 'जेताजी' थे, जो सवत् 1600(सन् 1543 ई०) म शेरशाह से लडकर काम आये, तथा उनके पुत्र 'पृथ्वीराज' और देवीप्रसाद' पीछे से राव मालदेव के सेनापति रहे

थे। ऐसी स्थिति मे प्रतापसिह् स सवधित किंवदन्ति तथा उपयुक्त छद सदेहास्पद प्रतीत होते है।

एक दन्तकथा के अनुसार 'करणी' देवी ने, जो दुरसाजी के कुल मे ही जन्मी थी, अपने विवाह् म सम्मिलित नही होने के कारण अपने पीहर वालो को श्राप दे दिया था, जिसमे ग्रस्त होने के कारण 'आढा' गाव को वे लोग छोडने लगे थे। इसी प्रसग मे मेहाजी वहा से चलकर जैतारण गाव म आए। यहा उन्हे गडा हुआ माल मिला जिसस मकान किराए लेकर रहने लगे। यही किसी जन यति ने इन्हे विद्याध्ययन करवाया।

विवाह् तथा सतति

दुरसा के दो विवाहिता सजातीय स्त्रिया तथा एक 'केसरबाइ' नामक पासवान' थी। विवाहिताओ मे 'भारमल', 'जगमाल' 'सादूल', 'कमजी' एव 'किसना' नामक पुत्र हुए। भारमल अधा था तथा इसके पुत्र रूपजी के कारण दुरसा के गहकलह हो गया। बडे लडका ने दुरसा की समस्त जागीर ले ली तथा दुरसा स्वय किसना के पास रहे। पासवान के पुत्र का नाम 'माधाजी' था। इस दुरसाजी ने महाराणा अमरसिंह स कहकर 5 6 हजार की वार्षिक आय का कागडी' नामक गाव जागीर मे दिलवा दिया। एक सौ तेरह वष की आयु मे सवत् 1708(सन 1651 ई०)म, कुछ के अनुसार सवत 1712(सन 1655 ई०) मे 120 वष की आयु म दुरसा का स्वगवास हुआ। इनकी दो स्त्रिया, एक पासवान तथा दो दासिया इनके साथ सती हुइ।

दुरसाजी के पर्याप्त लम्ब और घटनापूण जीवन की अनेक मनोरजक कथायें प्रचलित हैं। उनका साराश देते हुए थोडा परिचय यहा दिया जा रहा है —

1 **दुरसाजी और अक्बर**—सवत 1628 (सन 1571 ई०) म बादशाह अक्बर गुजरात जाते हुए यहा पाली परगने के 'गूदोज गाव मे ठहरे। बगडी के ठाकुर दुरसा के साथ यहा मुजरे के लिए हाजिर हुए। इस अवसर पर दुरसा ने अक्बर की प्रशसा मे एक छद सुनाया जिससे प्रसन्न होकर अक्बर ने इन्हें एक हाथी तथा लाखपसाव' (एक लाख के मूल्य का दान) दिया।

2 **दुरसाजी और बरामखा**—एक बार दुरसाजी पुष्कर स्नान करन के लिए गए। उस समय अक्बर के अभिभावक बरामखा अजमेर आए हुए थे। दुरसाजी ने उनसे मिलने का प्रयत्न किया पर बरामखा के लोगो ने मिलने नही दिया। इस पर उन्होंने युक्ति सोची। एक दिन जब बरामखा बाहर जा रहे थे तो दुरसा ने उनके माग से थोडी दूर जाकर य पक्तिया जोर-जोर से पढनी प्रारभ की—

आफनात्र अधेर पर, जगनी पर ज्यू नीर।
दुरसा कवि का दुक्ख पर, है बहराम वजीर ।।

इस पर बरामखा ने हाथ के इशारे स दुरसाजी को निकट बुलाया तो उन्होने तीन दोहे और कहे —

तू बदा अल्लाह का, म बन्दा तेराह ।
तेरा है मालिक खुदा, तू मालिक मेराह ।।
पीर पराई मटना, एह पीर का कामि ।
मरी पीडा मेट दे, बडा पीर बहराम ।।
विभीषण कू वारिधितट, भेंटे वो एक राम ।
जब मिलिया अजमेर मे, दुरसा कू बराम ।।

बरामखा ने प्रस न होकर इन्हे डर पर बुलाकर आवभगत की और एक लाख रुपया पुरस्कार मे दिया। दुरसा न बरामखा से विनती की कि वे उसे 'अकबर' से मिला दें। बरामखा ने वचन दिया कि वह दा माह बाद दिल्ली आये तो मुजरा करा दिया जाएगा। इस पर दुरसा न दिल्ली जाकर अकबर की प्रशसा म निम्नलिखित आशय का गीत कहा—

बाणाबळि लखण (क तू) अरजण बाणाबळि ।
सर दस रोळण (कै तू) कस सहार ।।
सासो भांज हुमायु समोभ्रम ।
अकबर साह कवण अवतार ।।

'तू धनुर्विद लक्ष्मण है या अजुन ? दशसिर का सहार करन वाला राम है या कस को मारन वाला कृष्ण ?" हे हुमायू के पुत्र, अक्बर, मेर सशय का मिटा, तू इनमे से किस का अवतार है ?" कहत है चार पदो के इस गीत का सुनकर अक्वर न दुरसा का कोडपसाव दिया। यह घटना सवत् 1615 16 (सन् 1558-59 ई०) की बताई जाती है।

3 राव सुरताण से सबध—सवत 1640 (सन 1583 इ०)म अक्बर न 'जग माल' सीसोदिया को सीराही क राव 'सुरताण क विरुद्ध सहायता दी। जोधपुर के 'रायसिह चद्रसेनोत क साथ दुरसा ने भी 'दत्ताणी नामक स्थान पर लडे गए इस युद्ध म भाग लिया था। इस युद्ध मे सुरताण ने अच्छी वीरता दिखाई और दुरसा बुरी तरह घायल हो गए। जब युद्ध क्षेत्र म किसी ने घायल दुरसा को मारने के लिए तलवार उठाई तो उन्हाने अपन आपको चारण बताया। इस पर उन्ह कहा गया कि चारण हो तो युद्ध मे वीरगति को प्राप्त हुए 'समरा दवडा' के विषय मे कुछ कहो। दुरसा न तत्काल निम्नलिखित दाहा सुना दिया—

धर रावा, जस डूगरा, व्रद पोता सत्रहाण ।
समर मरण सुधारियो, चहु थोका चहुवाण ।।

'अर्थात समरा देवड़ा ने चारो ही रूपो म अपना जीवन सार्थक कर लिया। सीरोही क रावो की धरती की रक्षा की, पहाड़ो को यश प्रदान किया, अपने वशजो का कीर्ति दी तथा शत्रुआ की हानि की।"

राव सुरताण यह सुनकर बहुत प्रसन्न हुआ और उन्हे पालकी मे बिठाकर घर ले गया। कालान्तर म उन्हे 'पाळपात' बनाकर 'कोडपसाव' का दान तथा 'पेशुवा' और 'साल' नामक दो गाव भी दिए। इस सबध मे यह भी कहा जाता है कि राव न दुरसा को चार गाव दिए थे जिनम स दो तो उन्होंने सुप्रसिद्ध 'सारणेश्वर' महादेव के मदिर को अर्पित कर दिए तथा दो स्वय के लिए रखे।

4 मोटा राजा और दुरसाजी—सवत 1643 (सन् 1586 ई०) मे दुरसाजी जोधपुर क मोटा राजा 'उदयसिंह' के चारण विरोधी कार्यों का विरोध करने के लिए सामूहिक धरने म बठे थे। परपरा के अनुसार दुरसाजी ने भी अपने कठ म कटार खाकर मरना चाहा था, पर किसी चारण ने यह कह कर रोक लिया कि आप जीते रहोगे तो कभी किसी बडे मुह से राजा को उलहना दिलवाओगे। तत्पश्चात दुरसाजी अकबर के दरबार म गए और वहा उनकी प्रशसा मे गीत पढा। अकबर ने जब पूछा कि तुम्हारी आवाज भर्राई हुई क्या है, तो उन्होंने मोटा राजा की ओर इशारा करके कहा कि यह सब इनकी कृपा है। कहते हैं कि सारा वृत्तात सुनकर बादशाह ने मोटा राजा के काय को अनुचित बताया।

5 बारहठ लक्खा और दुरसाजी—बारहठ लक्खा अकबर के कृपा पात्र थे। उन्होंने दुरसाजी को शाही कृपा दिलवाने मे मदद की थी। इस उपकार की भावना से दुरसाजी ने उनकी प्रशसा मे यह दोहा कहा था—

दिल्ली दरगह अब तर, ऊचो घणा अपार।
चारण लक्खा तारणा डाळ नमावणहार॥

'दिल्ली के दरबार मे कृपा रूपी आम का पेड बहुत ऊचा है। चारणो के लिए उसकी डाली को झुकाने वाला लाखा चारण ही है।" इस पर लाखा ने सारा श्रेय भगवती करणी को ही देते हुए यह प्रत्युत्तर कहा—

दुरसा डूगरडेह, कुण वाला छाया करै।
आढा आपाणेह, महर करीज मेहवत॥

'दुरसा, डूगरा (पवता) पर छाया कौन करता है ! हे आढा गोत्र के वशज अपने (चारणा) पर तो भगवती करणी ही की कृपा है।"

6 महाराणा अमरसिंह से सपक—कहा जाता है कि अपने स्वर्गीय पिता महाराणा 'प्रताप' से प्रेरणा पाकर अमरसिंह न दुरसाजी को अपने यहा बुलवाया और 'रायपुरिया' नामक गाव के साथ 'कोडपसाव' भी दिया। गोढवाड परगने का यह गाव दुरसाजी ने, उदयपुर जाते समय उक्त गाव के चौधरियो की राय

मानकर, मागा था। सबधित छद का एक चरण इस प्रकार है—

"नेडो हू जावू नवकोटी, राण दिए तो रायपुर"

"अर्थात, राणाजी यदि मुझे रायपुरिया दे दें तो मैं नवकोटी मारवाड के नजदीक हो जाऊ।" एक अन्य पक्ति—'क्षत्रिया कुळ लहणो छोडायो, राज दियता रायपुर" म रायपुर क दान से क्षत्रियो पर चारणा के ऋण से उऋण होने की बात कही गई है।

कहते हैं एक बार दरबार मे बठत समय दुरसाजी नीचे गिर गए थे, जिस पर महाराणा ने स्वय 'खम्मा खम्मा' (क्षमा क्षमा) कहते हुए उन्ह उठाकर बठाया था। इस अवसर पर भी दुरसाजी ने दुठाडियो' नामक गाव उनसे प्राप्त किया था, जिस सबध की पक्ति इस प्रकार है "खमा खमा करि उठाडिया, ता दे राजा दुठाडियो।"

7 **मोहब्बतखान से सबध**—कहा जाता है कि मोहब्बतखान (महावतखा) न दुरसा का एक लाख रुपये वार्षिक देना बाध दिया था। वृद्धावस्था के कारण दुरसाजी स्वय दिल्ली नही जा सके और अपने छोटे पुत्र किसना को ही अजमेर मे खान के पास भेज दिया। खान ने मजबूरी बताई और कहा कि अजमेर म पसे कहा है! इस पर दुरसाजी खुद आकर मिले और एक छद कहा, जिसकी एक पक्ति इस प्रकार है—

'तू ज्या ही दिल्ली तखत, खान मोहब्बतसीह।'—

इससे प्रस न होकर खान ने वही रकम का प्रबध करवा दिया।

8 **जोधपुर महाराजा गजसिंह द्वारा सम्मान**—कहते हैं कि रायपुरिया' म हवेली बनवान के लिए दुरसाजी 'सोजत' से पत्थर मगवाते थे। एक बार महाराजा गजसिंह जब सोजत म थ ता गाडिया देखकर पूछताछ की और गाव पाचेटिया' मे डेरा करके दुरसाजी का बुलवाया। जब महाराजा ने उन्ह साथ चलन का कहा तो वे बाने कि आउवा' के धरन म अखाजी बारहठ, जो समझान आए थे, तो मर गए और मैं जीता रहा, इसी लज्जा से मारवाड म नही जाता। कहते है कि महाराजा ने उन्ह क्षमा कर दिया तथा उनके पुत्र किसनाजी का साथ ल गये और परगन साजत का गाव पाचेटिया सवत 1677 (सन 1620 ई०) म उन्ह दिया। सवत 1679 (सन 1622 ई०) म परगने जोधपुर का 'हींगाला' नामक गाव और दिया गया।

9 **दुरसाजी और सत कवि रज्जब**—राघवदास कृत 'भक्तमाल म आए एक प्रसग के अनुसार दुरसाजी बादशाह से प्राप्त पालकी, सोन का अकुश तथा सोन की छडी लेकर दिग्विजय के लिए निकले। उनका प्रण था कि जिसे शास्त्राथ म जीत लेंगे उसे पालकी मे जोतेंगे, तथा जिससे हार जायेंगे उसे बादशाह से प्राप्त सम्मान-सामग्री दे देंगे। इसी प्रसग मे व 'जयपुर' के पास 'सागानेर' मे आए और

सत कवि रज्जबजी स चर्चा करते हुए उन्हाने यह छद कहा—

वावन अक्षर मप्तस्वर, कठ भाषा छत्तीस।
इनसे ऊपर जो कहे, सो जानू कवि ईस॥

रज्जबजो न इसके प्रत्युत्तर म निम्न दोहा कहा—

बावन अक्षर, सप्त स्वर, कठ भाषा छत्तीस।
इनस ऊपर हरिभजन, रज्जब कही हदीस॥

कहते हैं इस पर निरुत्तर होकर दुरसाजी ने समस्त सामग्री रज्जबजी को भेंट कर दी तथा उन्हे अपना गुरु बना लिया।

10 सिरोही के 'अखराज' द्वारा सम्मान—कहते हैं सवत 1699 (सन् 1642 ई०) म जब दुरसाजी सिरोही गए तो अपने पौत्र महेस' को अफीम का सेवन करते देखकर क्रुद्ध हो गए और राव अखैराज के लिए कहा कि इसके हाथ म ठीकरा (मिट्टी का पात्र) पकडाकर बडी कृपा की है। इस पर राव न महेस को सिरोही के सिहासन पर बैठाते हुए दुरसाजी से कहा कि हमारे तो यही ठीकरा है। दुरसाजी बडे प्रसन्न हुए और यह दान अस्वीकार कर दिया। बाद म अखराज न महेस को 'विरायली' तथा 'जूड' नामक दो गाव और दो 'लाखपसाव' दिए।

11 अन्य ऐतिहासिक व्यक्तियो से सबध—दुरसा न अनक वीरो और नरेशो के विषय मे काव्य रचनायें की और उनस दानादि भी प्राप्त किए। उन नामो म स कुछ अन्य प्रमुख व्यक्ति निम्न प्रकार हैं—

1 राव अमरसिह गजसिहोत
2 रावत मेघा
3 कुमार अज्जा
4 सोलकी वीरमद
5 महाराजा मानसिह कछावा
6 रोहितासजी
7 देवीदास जैतावत
8 हाथी गोपालदास
9 महाराजा पृथ्वीराज राठौड। इनके अतिरिक्त वे स्वरचित शताधिक डिंगल गीतो के अन्य अनेक नायको के भी निकट सपर्क म रहे थ।

जिन विशिष्ट व्यक्तियो के उल्लेख दुरसाजी न सम्मानपूर्वक किये हैं, वे हैं राव रायसिह, गोपाल माडणोत' तथा महावतखान। इस प्रसग का दुरसाजी के विषय म कहा छद इस प्रकार मिलता है

आधो जघराजियो राव सोजत मे राखै
रायसिंघ कुळरूप जको बाबा कहि भाखै

माडण रो गोपाल वडो ठाकुर वरदाई
पलटी सिर पागडी कहयो निज मुख सू भाई
मान सो खान महोवत मिलै छत्रपती चाहै घणा
वडभाग वाह पाळक वरण, तू दुरसा मेहा तणा

सोजत का राव रायसिंह, आध राज्य का स्वामी सा बना साजत म 'वावा' कहकर बतलाता है। माडण का पुत्र गोपाल, जो वरदायक वडा ठाकुर है पगडी वदल भाई वन गया है। मोहब्बत खान सम्मानपूर्वक मिलता है। दूसरे अनेक छत्रधारी राजा भी वहुत चाहते है। चारण वण की पालना करने वाला मेहा का पुत्र दुरसा वडा भाग्यशाली है।'

विशिष्ट दान और जागीरे

कहा जाता है कि दुरसाजी को नौ 'कोडपसाव' मिले थ जिनम से तीन वाद शाह अकबर स एक सिराही के राव सुरताण से, एक बीकानेर के महाराजा रायसिह स एक महाराजा अमरसिंह से तथा एक जामनगर' के जाम सत्ताजी स मिला। इसक अतिरिक्त धूदला (मारवाड) पाचेटिया (मारवाड) नातल कुडी (मारवाड) हीगोला (मारवाड) पेशुआ (सिराही) झाकर (सिरोही) अूड (सिरोही) साल (सिरोही) लूगिया (सिरोही) 'दागला, (सिराही), रायपुरिया (मवाड) दुठाडिया (मेवाड) और कागडी (मवाड) नामक गाव भी इहाने प्राप्त किए। इनके अतिरिक्त अनेक लाखपसाव तथा दूसरे पुरस्कार भी प्राप्त किए।

दुरसा के किए परोपकार एव निर्माण

दुरसा न दानादि म प्राप्त अपार धन राशि से परोपकार व अनक काय किए जिनम स कुछ प्रमुख इस प्रकार है

(1) आबू पवत पर अचनेश्वर महादेव के मदिर म दानादि के अवसर पर अपनी दो पीतल की मूर्तिया वहा स्थापित की, जिनपर उनक नामो का उल्लख है। अनक विद्वानो न इसकी सत्यता प्रमाणित की है।
(2) अपने जागीरी गावा—पशुआ तथा पाचेटिया म दुरसोळाव तथा किसन ळाव' नामक तालाब स्वय के तथा छोटे पुत्र किसना क नाम से वनवाए।
(3) 'पाचेटिया तथा हीगोला म आवास गह वनवाए।
(4) पेशुआ म बालेश्वरी देवी का एक तथा पाचटिया म दो मदिर वनवाय।
(5) रायपुरिया तथा दुठाडिया म वावडी, अरहट एव कुए बनवाय।
(6) चारणा का कोडपसाव का दान स्वय दिया।
(7) पुष्कर म चारणा का एक मला आमत्रित कर चौदह लाख रुपए व्यय किए

विरच्या प्रबंध वरणरो सूरज शशियर साख।
तठ खरच दुरसा तणा, लागा चवदा लाख॥

'सूय चद्र की माक्षी से दुरसा ने चारणों का प्रबंध किया जिसमे चौदह लाख लगे।"

दुरसाजी की यह सास्कृतिक परपरा उनके पुत्रो पोत्रो ने भी बनाई रखी। उनके पुत्र किसना के लडके महेस ने दुरसाजी के समय म ही पाचेटिया म दो भव्य मदिर बनवाकर उनमे दुरसाजी तथा किसनाजी की मूर्तिया भी स्थापित की।

दुरसा का स्वर्गवास

इस प्रकार एक लवा और यशस्वी जीवन जीकर दुरसा ने पाचेटिया मे देह त्याग किया। कहते हैं कि जब इनके साथ इनकी स्त्रिया, पासवान तथा दासिया सती हो रही थी तो राह चलती एक 'रैबारी' जाति की स्त्री के भी 'सत' चढ गया और वह यह कहते हुए इनके साथ ही सती हो गई कि ये मेरे पूव जन्म के पति थे।

यद्यपि दुरसाजी की मृत्यु सवत 1708 (सन 1651 ई०) म मानी जाती है पर मुशी देवीप्रसाद ने पाचेटिया गाव म बनी इनकी छतरी पर उत्कीर्ण एक लेख का हवाला देते हुए इनकी मृत्यु सवत 1699 (सन् 1642 ई०) मे पूव मानी है।

दुरसा द्वारा अन्य लोगो के विषय मे कहे गए तथा दूसरे लोगो द्वारा स्वय दुरसा के लिए कहे गए कई रोचक प्रसगो के छद मिलते हैं जिनम से कुछ यहा उद्धृत किए जाते हैं

1 बारहठ लक्खा द्वारा दुरसाजी के लिए कहा गया दोहा—

माय चराया वेरडा, बाप फडाया कन्न।
दुरसो आढो भूलगो, बो अन है यो अन्न॥

"तुम्हारी मा ने बछड चराए और तुम्हारा बाप कान फडवाकर सन्यासी बन गया। दुरसा, तुम भूल गए हो कि यह अन्न वही है, जो तुम्हे दुलभ था।

2 दुरसा ने 'भीमा आसिया' नामक कवि द्वारा दिए गए एक भोज के अवसर पर उसकी प्रशसा की तो उसके पुत्र किसना ने उन्हे मना किया। इस पर दुरसा ने निम्न दोहा कहा

किसना ससारो कहै, वूठा मेहा वत्त।
भीमा न कहता भलो मोन वरज मत्त॥

"बरसते मेह की बात तो सारा ससार ही कह उठता है। किसना, भीमा की *प्रशसा करते हुए मुझे रोक मत।"*

3 पृथ्वीराज राठौड कृत वेलि किसन रुक्मणी री नामक सुप्रसिद्ध काव्य की

प्रशसा म निम्नलिखित छद दुरसा द्वारा कहा बताया जाता है—

रुखमणि गुण लखण रूप गुण रचवण
वल तास कुण कर वखाण।
पाचवो वद भाखियो पीथल
पुणियो उगणीसमो पुराण॥

"रुक्मिणी के गुणा और रूप का वणन करने वाले पृथ्वीराज के वेलि नामक ग्रथ की रचना का कौन वखान करे ! उसन पाचवा वेद और उन्नीसवा पुराण ही कह डाला है।'

दुरसा का महाराणा प्रतापसिंह की प्रशस्ति म लिखित 'विरद्ध छिहत्तरी' नामक ग्रथ का रचयिता मानकर राष्ट्रकवि के रूप मे प्रतिष्ठित करते हुए अनेक लेखको ने अपने विचार प्रकट किए है। इस सदभ मे उनके प्रामाणिक जीवन वृत्त की खोज की जानी आवश्यक है, ताकि इतिहास का सत्य उजागर हो सके।

•

वह सम्मान अन्य किसी राजवंश को नही दिया जा सकता था। इस-नद के पीछे राजवंशो म परम्परागत वमनस्य और स्वय के जातीय गौरव की दुनिवार भावना कारणभूत थी।

सम्राट अकबर न इस स्थिति का सही अनुमान लगाकर, तथा तत्कालीन स्थानीय शासकों की गिरती हुइ आर्थिक स्थिति का लाभ लेकर, उनसे ववाहिक सम्बन्ध स्थापित करने की नीति अपनाई। उसके साथ ही उसने सभी राजपूत शासको एव उनके कुमारों को शाही सेना म भर्ती कर उन्हें उपयुक्त मनसब भी प्रदान किए। इस नीति क दो लाभ हुए। एक तो यह कि वे नरेश अपने आपको सम्राट के सम्बन्धी और निकटवर्ती मानने लगे, तथा दूसरा यह कि, अपने राज्यो से दूर शाही सेवा मे निरंतर युद्धों म लगे रहने के कारण, वे अपने पडोसियो से लडने का अवसर नही ढूढ पाए। मुगल हरम म गई राजकुमारियो न अपने बाप दादाओं को बादशाही कृपा के पात्र बनाने के यत्न किए और स्वय नरेशो न भी सुदूर के युद्धो मे लूट के माल से अपनी माली हालत सुदृढ की। मनसबो के वतन आदि भी पर्याप्त उदार होने के कारण उनके अधीनवर्ती सरदार, सामंत और बहुसंख्यक सैनिक भी सम्पन्न बनने लगे। यह सम्पन्नता मुगल काल मे बने किलो, महलो, गढियों, हवेलियो, बागो तथा अन्य अनेक आवास-गृहो आदि मे परिलक्षित होती है।

मुगलो द्वारा समस्त भारतवर्ष को ही नही अपितु अफगानिस्तान आदि मुस्लिम देशो का भी अपने अधीन करने की सतत चेष्टा म राजपूत वीरो न बहुत बडा योगदान किया। राजपूत नरेशो मे सम्राटो की कृपा प्राप्त करने की एक होड सी मच गई जिससे उन्होंने अद्भुत पराक्रम प्रदर्शन करने म एक दूसरे को पीछे धकेल दिया। राजपूतो का यह शौर्य मुगल साम्राज्य के विस्तार म बडा सहायक सिद्ध हुआ। दूसरी ओर राजपूत वीरो को भी तलवार तीर भाले कटार आदि परम्परागत अस्त्र शस्त्रो के अतिरिक्त बदूक तोप, नाल आदि नए आविष्कारो म भी महारत हासिल हुई।

इस प्रकार लम्बे समय तक मुगल सम्राटो एव उनके 'अमीरो खाना-नवाबो के निरंतर सम्पर्क मे रहने के कारण देशी नरेशो ने मुगल शान शौकत और जीवन पद्धति को पर्याप्त मात्रा म अपना लिया। वेश भूषा, अस्त्र शस्त्र बोल चाल, युद्ध कौशल, रहन सहन, दरबारी शिष्टाचार आदि सभी पक्षों मे मुगल प्रभाव स्पष्टत दृष्टिगोचर होन लगा था। अखिल भारतीय स्तर पर दूसरे नरेशो, अमीरों आदि से सम्पर्क होने, तथा विभिन्न प्रदेशो म सेवा करते रहन से भी, राजस्थानी नरेशो के दृष्टिकोणों मे व्यापकता आई और अनुभव म वृद्धि हुई। तुलनात्मक दृष्टि से, अपेक्षाकृत अधिक सम्पन्न एव समृद्ध प्रदेशों के इस सम्पर्क से जीवन के प्रति उनकी लालसा मे भी वृद्धि हुई। मुगलो के वभव मे भागीदार

दायतें और यात्पिया भी पीछे नहीं रही। इन्ही महिलाओं की धार्मिक प्रवृति के कारण सत एव भक्ति साहित्य की बहुत बडी सामग्री राजकीय पोथीखानों म उनके गुटको के रूप म सुरक्षित रह पाई। नाथ-पथ, निगुणी सता तथा निम्बार्क एव वल्लभ-सम्प्रदायो को राजपरिवारो से निरतर प्रश्रय इन्ही महिलाओ के कारण प्राप्त हुआ। जैन धर्मावलम्बी वश्य वग के दिन प्रतिदिन बढते प्रभाव के कारण नरेशा न जन धम के प्रचार प्रसार म भी बाधा नही डाली और बन पडता सहयोग भी दिया। हिन्दू राज्यो की प्रश्रय की यह नीति पिछली कई शताब्दियो से चली आ रही थी। मुगल सत्ता के जड पकड जाने के कारण मस्जिदा, दरगाहो तथा मुसलमाना के अन्य धार्मिक स्थाना को अधिक सम्मान, श्रद्धा और महत्त्व मिलने लगा। पर यह सब होते हुए भी बहुसंख्यक हिन्दू पव-त्योहार---दशहरा, दीवाली, होली, तीज, गणगौर आदि हो राजकीय उत्सव बन रह जिनम स्वय नरेश लवाजमे के साथ सम्मिलित होते। राजकीय दरबार भी ऐसे ही अवसरो पर आयोजित किए जाते। अकबर न भी धार्मिक सहिष्णुता की नीति ही अपनाई और सभी धर्मों को बिना किसी रोक टोक के अपनी मर्यादाओ का पालन करने दिया। स्वय उसकी विवाहिता हिन्दू रानिया भी हरम म अपने देवी-देवताओं की पूजा आराधना कर सकती थी। जहागीर तथा शाहजहा ने भी इस नीति म कोई अन्तर नही आने दिया, जिससे धार्मिक कटुता उभरने नही पाई।

आलोच्य काल म चारण कवियो का प्रभाव दिन प्रतिदिन बढने लगा और उन्हें 'लाख पसाव', 'कोड पसाव' आदि दान दिए जाने लगे जिनम गावो के 'सासण' भी सम्मिलित थे। इससे ब्राह्मण समाज को दिए जाने वाले दानो मे कमी आई और वह केवल धार्मिक कृत्या की प्रतिष्ठार्थ दिए गए दानो के ही अधिकारी रह गए। काव्य, साहित्य, आयुर्वेद, ज्योतिष तत्र मत्र, सगीत आदि विद्याओ एव कलाओं का सामान्य रूप मे राज्याश्रय तो था, पर चारण कवियो के बिरद काव्य का प्रचलन अधिक होता गया और व राजपूत नरेशो सामतो-ठाकुरो के साथ भाईचारे का दावा करने लगे। इसके पीछे कुछ चारणी महिलाओ की मान्यता का भी प्रभाव था जिन्हें शक्ति के अवतार रूप म प्रचारित एव प्रतिष्ठापित किया गया। इन देवियो की सिद्धियो और वरदानो की अनेक गाथायें तत्कालीन समाज म बडे विश्वास और श्रद्धा के साथ कही सुनी जाने लगी थी। साधारण गृहस्थ परिवारो म जन्मी इन चारणी देवियो की एक लम्बी परपरा चारण समाज मे चली आई है और विज्ञान के इस युग मे आज भी ऐसी देविया श्रद्धा की पात्र समझी जाती हैं। प्राय सभी राजपूत वशो म एक न एक ऐसी किसी चारणी देवी की मान्यता चली आई है। 'चारणो' के इस अभ्युदय से उन्होने अपने आपको राजपूत समाज के रीति-रिवाजो और अन्य सभी शिष्टा-

चारा मे ढाल लिया और स्वय को राजपूतो के समान स्तर पर समझना प्रारभ कर दिया। विवाहादि अवसरो पर दान के लिए हठ करने और सामूहिक सत्याग्रह धरने आदि द्वारा राजपूतो को तदय विवश करन की नीति भी उन्होने अपनाई। उनके अनुकूल नही बनने वाले राजपूतो की निन्दा करने की चेष्टायें भी की गइ। चूकि चारण आजीविका के लिए पर्याप्त भ्रमण शील रहते थे, अत उनके जन सम्पक स निन्दा प्रसगा को वढावा मिलन के भय से राजपूतो का उन्ह तुष्ट करने को भी बाध्य होना पडता था। लेकिन ऐसे चारण विद्वाना की भी कमी नही थी जो सत्य, धम, शौय और दूसरे वीरोचित एव क्षत्रियोचित गुणा के उत्कप को प्रोत्साहित करते थे। ऐसे विद्वाना को सभी पूण सम्मान की दष्टि से देखते थे। ऐसे ही कुछ चारण कवि युद्धा मे भी राजपूतो का साथ देत थे तथा अवसर पडने पर कधे से कधा लगाकर स्वय युद्धभी करत थे। गौ ब्राह्मण-अवला का अवध्य मानने वाले प्राचीन भारतीय आदश के अनुसरण पर चारण भी अवध्य समझे जात थे। अत पता पटन पर या तो क्षत्रिय स्वय इन्हे जीवित छोड देते थे अथवा कभी कभी य स्वय प्राण याचना करके बच जाते थ।

हरेक ऊची जाति के यहा याचना करने वाली कोई न कोई नीची जाति की परपरा बनी रही है। इसलिए चारणा की भी अपनी याचक जातिया खडी हुइ। जिस प्रकार चारण राजपूता के यहा याचक बनकर दान, नग वगरह लते थे, उमी प्रकार चारणा के यहा 'मातीमर' तथा 'रावल जाति के लोग याचक बन कर आते थ। य याचक भी चारणो की तरह काव्य रचना करते थे। कई मातीसर ऊचे दर्जे के कवि हो गए ह। 'रावल' लोग भी अच्छी रचनायें कर पाते थे क्योकि डिंगल काव्य कुछ रूढियो म बधकर रह गया था। इन मोतीसरो, रावलो को चारण लोग भी उसी प्रकार दानादि से प्रसन्न करते थे जिस प्रकार वे स्वय राजपूता से प्राप्त करते थे। जो सम्मान चारणा का राजपूत घरो म होने लगा था वैसा ही चारण मातीसरा तथा रावला का देने लगे थे। इसस भी चारणो द्वारा राजपूत वग की समानता करन की प्रच्छन्न भावना प्रकट होती है।

चारणा के समकालीन ही, अपितु कुछ अर्थों म उनकी पूववर्ती भी, एक और काव्यकर्मी जाति थी, भाटा रावा-कवीश्वरा की। ये लोग अपनी रचनायें व्रज भाषा से मिलती-जुलती भाषा म करत थे, जो पिंगल के नाम से जानी जाती थी। इनकी प्रतिस्पर्धा म चारणा की भाषा 'डिंगल' के नाम स प्रसिद्ध हुई। डिंगल पिंगल का साहित्यिक द्वन्द्व भाट चारणा के व्यावसायिक सघष के कारण चला। पूर्वी तथा दक्षिणी राज्या म भाटा का प्रमुत्व अधिक रहा जब कि उत्तरी एव पश्चिमी क्षेत्र म चारणा का। कालातर म चारणा न भाटा की तुलना म अपना वचस्व बढा लिया।

वैश्य वग म एक और समुदाय प्रभावशाली बनने लगा था जो व्यवसाय करने के अतिरिक्त शासकों से भी निकट सम्पक मे था। ये लोग प्राय जन धर्मावलम्बी थे और 'ओसवाल' के सामान्य नाम स जाने जाते थे। इनम से अधिकाश की उत्पत्ति राजपूत कुलो से मानी जाती है। इनका रहन सहन, वश भूषा, उठ बैठ, बोल चाल आदि सभी उच्चकुलीन राजपूतो के समान था। जैन धम म दीक्षित होने के कारण मास मदिरा का सेवन इनके लिए वर्जित था। देशी रियासतो मे ये लोग उच्च पदासीन रहते थे। चारण लोग इनके विरुद भी बखानते थे। दूसरी चारणतर जातिया भी इनकी याचक थी। वैश्य होते हुए भी ये लोग युद्धो में भाग लेते थे और सेनानायकत्व भी करते थे।

इस सामती और पूजीवादी ढाचे के अनुरूप ही अ य मध्यवित्त के लोग अपने आपको ढालने का प्रयत्न करते थे। पुरोहित वग भी सामतो और धनिको की कृपा का आकाक्षी बना रहता था। अध्ययन अध्यापन, कम-काड, भजन पूजन, दान-दक्षिणा आदि के द्वारा तो वह अपनी रोटी का ही जुगाड कर पाता था। कृपको और कमकरो के बहुसख्यक वग की दशा शोचनीय ही थी। उन्ह उनके श्रम का समुचित प्रतिफल नही मिल पाता था। आये वष पडने वाले अकालो से कृषक वग की आर्थिक स्थिति कभी स्थायी रूप से सुदृढ नही बन पाती थी। सिंचाई के अभाव म वर्षा के भरोसे ही अधिकाश कृषि-काय चल पाता था। कृपको तथा कमकरों से बेगार लेने की प्रथा पूरे जोर मे थी। उच्च कुलो म दास दासिया के रूप मे अथवा जीवनपय त मजदूरो के रूप म काय करने के लिए विवश परिवारो की सख्या बढती जा रही थी।

राजपूत वग की देखादेखी दूसरे सम्पन्न वग भी उपपत्निया और रखैलें रखते थे जिससे अवैध सतानो का एक नया वग खडा हो गया था। 'दरोगा' या 'गोला' कहे जाने वाले ये लोग पीढियो तक दासो के रूप म दहेज आदि म दिये लिये जाने लगे थे। उनके साथ अमानुषिक व्यवहार की घटनायें भी घटित होती थी। राजपूतो की विधवा स्त्रियों को जब सामाजिक और मनोवैज्ञानिक कारणो से सती के रूप म जलने को विवश होना पडता था तो अनेक बार इन दास दासियो को भी जला दिया जाता था। 'पातरो' का एक और वग भी था जो राजाओ के भोग विलास के लिए भर्ती की जाती थी। इनके नए नामकरण श्रृंगारिक भावना से किए जाते थे यथा—रगराय, रूपरेखा, रमतरग आदि। इनके समान ही 'गायणिया' भी भर्ती की जाती थी जिनका काम राज-परिवार के लोगों का गायन के द्वारा मनोरजन करना था। पर अनेक बार इन गायणियो पर भी राजा की नजर पड जाती तो य उपपत्नियों की तरह रहने लगती। असल मे यौन सबधो को लेकर राजाओ के लिए कोई रोक टोक नही रह गई थी। वे किसी भी जाति या वग की स्त्री को बिना हिचक के अन्त पुर मे डाल सकने म अबाध

किसी प्रकार अपनी यौन तुष्टि के लिए विवश कर सकते थे। ऐसी बहुसख्यक पातरें व अन्य दासियां भी मृतक राजा के साथ जला दी जाती थी।

अन्त पुरों म काम करने के लिए मुगल हरमा के अनुकरण पर 'नाजर' भी रखे जान लगे थे जो समय पाकर उच्च पदों पर भी आसीन हुए। कुमारावस्था म ही बालका को 'नाजर बनाने के उद्देश्य से नपुसक बनाने का व्यवसाय चल पडा था जिसे रोकने की बहुत कुछ चेष्टा स्वय जहागीर ने भी की थी। स्वामि-भक्ति के प्रदशनार्थ ऐसे नाजर भी चिताओ मे जलाय गए, ऐसे दृष्टात मिलत हैं।

अनियत्रित भोग विलास के इन कार्यों के लिए पर्याप्त मात्रा मे साधन जुटाने के लिए जनसाधारण पर भाति भाति के कर एव लाग बाग आरोपित किए गए जिनसे उनकी आर्थिक स्थिति और अधिक शोचनीय हो गई। राजा की तरह ही छोटे सामत भी इसी प्रकार का आचरण करने को प्रेरित हुए और छोटे छाटे जागीरी गावो म स्थिति और भी बदतर हो गई। अधिक आवश्यकता होने पर छुटभाई लाग गावा को लूटन म भी नही हिचकते थे और ऐसा करने को व क्षत्रिय धम का पालन कहकर 'ग्रास' की सना देते थे। युद्ध, राज परिवार मे विवाह, पुत्र जन्म आदि विशिष्ट अवसरा पर विशेष प्रकार के अन्य कर तथा लाग-बागें भी ली जाती थीं।

उच्च एव निम्न वग के बीच इतने विशाल अतर को देखते हुए जनसाधारण के शक्षणिक एव सास्कृतिक विकास की कल्पना भी नही हो सकती थी। शिक्षा की सुविधा भी शहरी मध्यवित्त के लोगो तक ही सीमित थी। तथाकथित उच्च एव कुलीन वग के लिए तो मनोवाछित शैक्षणिक व्यवस्था हो ही सकती थी, पर अन्य लाग इससे वचित ही रहते थे। उन्हे जीवन यापन के लिए परपरागत पारिवारिक व्यवसायो म ही लगना पडता था। स्त्रिया की शिक्षा का ता प्रश्न ही नही उठ सकता था।

सास्कृतिक दृष्टि से साहित्य, कला, सगीत एव हस्त शिल्प आदि भी उच्च कुलीन लोगों के मुखापेक्षी थ। सगीत-नृत्य को समाज म हेय दृष्टि स देखा जाता था। पेशेवर वश्यायें ही इस धधे के रूप म करती थी तथा कुलीन लोग भी उनके यहा जाते थे। राजघराना म वेश्याओ की पूछ थी। अन्य धार्मिक लाग भी महफिला उद्यान-गोष्ठियो आदि का आयोजन करते जिनम वश्यायें भाग लती। सगीत की रक्षा का सच्चा श्रेय धार्मिक सम्प्रदायों को है जिनके यहा भगवद् भक्ति के निगुण अथवा सगुण पद,साखियां आदि गाई जाती थी जो अनेक राग रागिनिया मे निबद्ध होती थी। धनिक लोग ही हवेलिया, छतरियों आदि म चित्रकारों का लगाकर भित्ति चित्र बनवात अथवा प्रेम-कथाओं के गुटकों म विविध प्रकार के

चित्र बनवाते। ढोला मारू, बीजा सोरठ, नागजी नागमती, जलाल बूबना आदि बहुसख्यक प्रेम-कथाए इस युग म चित्रित हुइ। य गुटके उच्चकुलीन लोगों म एक-दूसर का भेंट म दिए जाते थे। रामायण, महाभारत, गीत-गोविंद, कृष्ण लीला, रासमडली, बारहमासा, राग रागिनी आदि के बहुसख्यक चित्र भी धनिकों के प्रश्रय म बन। इसी प्रकार वस्त्र, अलकरण, युद्ध सामग्री आदि की अनकविध वस्तुए शिल्पिया क हाथा से सुसज्जित हुइ जिन्हें समथ लोग ही खरीद पात थे।

समाज धार्मिक अधविश्वासा एव परपरागत रूढिया से घिरा हुआ तो था ही पर उन्हें चिकित्सा शिक्षा, सचार-साधन एव आवागमन क लिए भी आदिम तरीका पर अवलबित रहना होता था। आवागमन एव सचार के अभाव म पारस्परिक विचार विमश भी सभव नहीं था और ग्रामीण जीवन अपन स्तर पर पथक इकाई के रूप मे ही चल पाता था। इसके लिए पडोस, गाव और आस-पास के लोगा का पारस्परिक सहयोग एव विश्वास ही एकमात्र सबल था। अत जातीय पचायता का प्रचलन था और व ही सभी प्रकार के मामले निपटा देती थीं। गावो के मुखियाओ क पास भी कम ही मामले जाते। इस प्रकार स्वशासन की आत्मनिभरता हान के कारण ऐस कामों म राजकीय दखल नाममात्र का ही रह पाता था।

चोरी डाके की घटनायें अपेक्षाकृत कम हो पाती थी क्योंकि सुरक्षा का दायित्व राज्य का सबसे बडा काय था। जिस राजा या सामत के यहा सुरक्षा नही हो पाती उसे छोडकर लोग अन्यत्र जा बसते थ। आर्थिक समृद्धि के लिए राजा एव सामत, वणिक वग एव काश्तकारो को सुरक्षा का भरोसा दिलाकर अपन यहा बसन के लिए आमत्रित करते थे।

स्थानीय राजस्व एव अन्य करो के अतिरिक्त भ्रमणशील व्यापारियो 'बनजारो से एव राह चलने वाली 'कतारों' से निर्धारित मात्रा म कर लिया जाता था। मुख्य व्यापार मार्गों पर पडने वाले राज्यों म तो आमदनी अच्छी मात्रा में हो जाती थी। घोडों के व्यापारी भी पर्याप्त कर देते थे। एक राज्य से दूसरे राज्य मे यात्रा करने पर आम लोगो पर कोई पाबदी नही थी। हा, उन्हे सबधित राज्यो के चुगी नाका आदि के करा को अवश्य देना होता था।

यह भी ध्यान देने योग्य है कि निरतर युद्ध भय मे रहत हुए भी जन साधारण मे कभी कोई बडे पैमाने पर भगदड की घटनायें नही होती थी। जन जीवन प्राय शात एव सामान्य रहता था। लोग समूहो मे रहते थे और सामूहिक भावना की आवश्यकता का अनुभव करते थे।

जब कि राजस्थान के बहुसख्यक राज्यो मे न्यूनाधिक यही स्थिति थी, मेवाड

जैसे विद्रोही राज्य मे अधिक जागरूकता और सजगता होना स्वाभाविक था। फिर भी नागरिक एव ग्रामीण जीवन इन परिस्थितियो का अभ्यस्त होने के कारण उन्हें भय की निरतरता आक्रात नही कर पाती थी।

राज और समाज की ऐसी स्थिति मे तत्कालीन चारण समाज के सम्मान्य व्यक्ति और एक प्रतिभासम्पन्न कवि के रूप मे दुरसा आढा के व्यक्तित्व और कृतित्व का मूल्याकन करना ठीक होगा।

●

अध्याय 3

कृतियो का विवरण

मध्यकालीन चारण कवि वीर तथा भक्ति रस की रचनाओ को प्रमुखता देत थे। युद्धवीरो, दानवीरो तथा सतियो की प्रशसा म कहा गया यह साहित्य हजारो रचनाओ के रूप म मिलता है। उनके अतिरिक्त नीति तथा भक्ति साहित्य म भी उनकी विशेष रुचि थी। उपयुक्त सभी प्रकार की रचनाए प्राय सभी सिद्धहस्त कवियो ने की है। जिस प्रकार वे काव्य-नायको के आदश गुणो का बखान करत थे उसी प्रकार उनके चारित्रिक अवगुणो तथा दुष्टता की भी निन्दा करते थे। उनके प्रशसात्मक काव्य को 'सर' तथा निन्दात्मक को विसर कहा जाता है। विसर' काव्य का प्रधान लक्ष्य भी प्रताडना के अतिरिक्त उनकी सदबुद्धि को जागत करना ही होता था। ऐसे काव्य को चारण चाबुक के नाम से भी कहा गया है।

चारणो की इस काव्य की भाषा को डिंगल कहा गया है। अधिकतर विद्वानो की सम्मति म यह नामकरण छदशास्त्र के लिए प्रचलित परपरागत नाम पिंगल पर बनाया गया था। पिंगल ऋषि को छदशास्त्र का प्रणेता मानने के कारण समूचे छदशास्त्र को ही 'पिंगल' के नाम स जाना जाने लगा था। चारणो से पूव सभवत सभी प्रकार का काव्य पिंगल द्वारा वर्णित छदो म ही रचा जाता था। चूकि चारणो न स्वय की अनेक छन्द विधाओ का भी आविष्कार कर लिया था, अत उन्होन अपन छद शास्त्र को डिंगल नाम दे दिया। धीरे धीरे यह अभिधान छदशास्त्र से हटकर 'भापा' के लिए प्रयुक्त होन लगा। ब्रजभापा म लिखने वाले कवियो की भापा का नाम पिंगल छदो के प्रयोग के कारण पिंगल प्रसिद्ध हुआ तो चारणो न अपनी राजस्थानी भापा की काव्य शैली का नाम 'डिंगल' रख लिया। इस प्रकार ब्रजभापा की वह काव्य शली जो राजस्थान म व्यवहृत हुई 'पिंगल' के नाम से जानी जान लगी तथा राजस्थानी भापा म चारणो द्वारा विशिष्ट शैली एव छदो म लिखा जान वाला काव्य डिंगल कहलाया। पिंगल और डिंगल' की यह स्पर्द्धा सोलहवी सदी के पहल से ही दिखाई देन लगी थी। सत्रहवी सदी के भक्त कवि साया झूला ने अपने नागदमण नामक काव्य म 'उठँ डीगळा पीगळा रा अगारा

पट्ट्वर इस द्वद्व की ओर सकेत किया है।

तत्कालीन चारण कवि 'पिंगल के छन्द शास्त्र से तो परिचित थे ही पर उन्होंने कुछ अन्य छदों का भी आविष्कार किया जिन्हें 'गीत' के व्यापक नाम से जाना जाता है। ये 'गीत गाये नहीं जाते थे, अपितु एक विशेष लय में निर्दिष्ट पद्धति से पढे जाते थे। इसलिए इन्हें गेय गीत नहीं समझा जाना चाहिए। प्रत्येक वीर अपने सुयश के लिए 'गीत' कहे जाने की इच्छा रखता था। कीर्ति के प्रतीक 'गीतडा कै भीतडा' (गीत या वास्तु निर्माण) मानने वाले भी गीतों को ही प्रमुखता देते थे, क्योंकि चूने पत्थर के निर्माण तो समय पाकर धराशायी हो जाते हैं, पर कीर्ति अमर रहती है—

"कीरत महल अमर कमठाण"

(कीर्ति रूपी महल कभी न मिटने वाले निर्माण हैं)

डिंगल छदों में पिंगल के दूहा, सोरठा, छप्पय, भुजगी, अडिल्ल, कुडलिया, झूलणा, तोटक, पद्धरि आदि तो सम्मिलित हैं ही पर एक सौ से ऊपर अन्य गीत छद हैं जिनमें से कुछ नाम इस प्रकार हैं—

साणोर वेलियो सुपखरो, झगझप, चितहिलोळ, प्रहास सावझडो, नीसाणी, पालवणी, गजगत, चोटीबध, घडउथळ ढोल आदि। पिंगल छदों की ही भांति ये मात्रिक तथा वर्णिक दोनों प्रकार के होते हैं। गीतों के नामकरण से उनकी ध्वनिगत एव गठनात्मक प्रक्रिया का बोध होता है। मृग की छलाग के समान छोटी पक्तियों के बाद बडी पक्ति आने के कारण 'झगझप' नाम सार्थक हुआ। इसी प्रकार ढोल की ध्वनि का आभास देने के कारण गीत का नाम ही 'ढोल' रख दिया गया। इसी प्रकार अन्य अनेक गीतों के नामकरण की विवेचना की जा सकती है। छदशास्त्रियों ने डिंगल के सभी छदों के लक्षण उदाहरण देकर तथा साथ ही काव्य शास्त्र के अन्य पक्षों की भी यत्किंचित विवेचना प्रस्तुत करते हुए लक्षण ग्रथों की रचना की है। अभी तक ऐसे डेढ दजन ग्रथ प्रकाश में आए है। इन सभी में 'गीतों की सख्या में बडा अतर है। रघुनाथ रूपक (कवि मछकृत), रघुवरजस प्रकास (किसना आढा कृत), हरि पिंगल (जोगीदास कृत) लखपत पिंगल (हमीरदान कृत), कविकुल बोध (उदयराम कृत), पिंगल शिरोमणी (कुसललाभ कृत) तथा छद रत्नावली (हरिराम निरजनी कृत) के नाम उल्लेखनीय है।

दुरसाजी ने अनेक डिंगल छदों में रचनायें की हैं जिनसे छद शास्त्र सबधी उनकी बहुज्ञता का आभास होता है। मध्यकाल में जैन यति बडे विद्याव्यसनी हुआ करते थे। उन्हें सस्कृत प्राकृत, अपभ्रश आदि के साथ साथ देश भाषाओं का भी अच्छा ज्ञान होता था। साहित्य शास्त्र के अतिरिक्त वे ज्योतिष, वैद्यक, सामुद्रिक, तत्र मत्र-यत्र आदि विद्याओं में भी निष्णात हुआ करते थे। एक किंवदंति के अनुसार दुरसाजी की शिक्षा एक जैन यति के यहा हुई थी। इसलिए उनका अनेक

विद्याओं एवं कलाओं में पारंगत होना समझ में आता है। और इन सबसे ऊपर, चारण समुदाय से पैतृक परम्परागत काव्य कला भी उन्होंने अवश्य सीखी होगी।

यहां दुरसाजी की रचनाओं का उल्लेख करते हुए उनके द्वारा प्रयुक्त छंदों, विषय वस्तु तथा संबंधित ऐतिहासिक व्यक्तियों और घटनाओं के विवरण देने का प्रयत्न किया जा रहा है—

(1) **विरुद छिहत्तरी**—महाराणा प्रताप की प्रशंसा में कहे गए छिहत्तर सोरठों का इसमें संकलन किया गया है। सोरठा' छंद दोहे का उलटा होता है। दोहे में दूसरे तथा चौथे चरणों की तुकें मिलती हैं जब कि सोरठे में पहले व तीसरे की। संख्यावाचक कृतियां साहित्य में बहुतायत से मिलती हैं। सतसई, शतक, बावनी, बहत्तरी, छत्तीसी, बत्तीसी, पच्चीसी आदि नामों से अनेक रचनायें प्राप्त हैं। 'छिहत्तरी भी इसी प्रकार का नामकरण है।

कई विद्वानों ने हाल ही में इस रचना के 'दुरसा कृत होने में संदेह व्यक्त किया है और इसे 'ऊमरदान लाळस कृत माना है। इसका एक कारण यह भी बताया गया है कि इसकी कोई प्राचीन प्रति उपलब्ध नहीं है। 'दबारी' नामक घाटी द्वार का उल्लेख—'देबारी सुर द्वार, अडियो अकबरियो असुर'—होने के कारण भी इसे समसामयिक रचना नहीं माना गया है क्योंकि उन आलोचकों की राय में उस समय देबारी का अस्तित्व नहीं था। वे सोरठा में आए हुए दुरसा' के उल्लेख के लिए मौन हैं, जो विचारणीय है। एक उल्लेख निम्न प्रकार है—

कर खुसामद कूर, करै खुसामद कूकरा।
'दुरस खुसामद दूर, पुरस अमोल प्रतापसी॥

यहां 'दुरस' संभवतः 'दुरसा' ने अपने लिए ही लिखा है। हो सकता है किसी कवि ने चलाकर ऐसे नामोल्लेख किए हों ताकि संशय की गुंजायश नहीं रहे। एक शंका का विषय यह भी है कि 'ऊमरदान' ने भी सन 1900 ई० में प्रस्तुत पुस्तक की भूमिका लिखते हुए इसकी प्राप्ति के स्रोत को प्रच्छन्न ही रखा है। ऊमरदान की रचना शैली यथा अतिशय निंदात्मक शब्दों का प्रयोग—अकबरियो, तुरकड़ा, कूकरा आदि, और देश, मातृभूमि आदि के अपक्षाकृत आधुनिक विचार भी इस शंका को पुष्ट करते हैं। दुरसा की प्रौढ़ मध्यकालीन भाषा व शैली से इस भाषा व शैली का साम्य बड़ी कठिनाई से भी नहीं बैठाया जा सकता। इन परिस्थितियों में इस प्रश्न पर निर्णयात्मक ढंग से कुछ नहीं कहा जा सकता। इस विषय में एक दंतकथा भी है कि मारवाड़ का एक कर्मचारी वच्छराज सिंघवी' किसी कारणवश राज्य से निष्कासित कर दिया गया। वह ऊमरदान लाळस से महाराणा प्रताप विषयक कुछ सोरठे लिखवा कर मेवाड़ के तत्कालीन महाराणा फतहसिंह के पास गया और वह प्रकाशित पुस्तक महाराणा को भेंट की। कहते हैं इस पर महाराणा ने उसकी दो सौ रुपये माहवार की पेंशन कर दी।

इस कृति के प्रारंभ व अत के कुछ सोरठे इस प्रकार हैं—

अलख पुरुष आदेश, देश बचाय दयानिधे।
वरनन करू विशेष, सुहृद नरेश प्रतापसी॥
गढ ऊचो गिरनार, नीचो आबू ही नही।
अकबर अघ अवतार, पुन अवतार प्रतापसी।
आभा जगत उदार, भारतवरस भवानभुज।
आतम सम आधार, पीरम राण प्रतापसी॥
कवि प्रारथना कीन, पडित हू न प्रवीन पद।
दुरसो आढो दीन, प्रभु तव सरण प्रतापसी॥

हे अलख पुरुष, आपको प्रणाम है। हे दयानिधि, देश के प्रिय नरेश प्रतापसिंह की रक्षा करें। मैं उन्ही के यश का विशेष वर्णन करता हू। गिरनार का गढ ऊचा है, पर आबू भी नीचा नही है (अत) अकबर यदि पाप का अवतार है तो प्रताप भी पुण्य का अवतार है। भारतवर्ष आपकी भुजाओ के बल पर ही स्थित है, आप अपनी उदारता से ससार को आलोकित करते हैं। अत, हे महाराणा, आप ही पृथ्वी पर आत्मा के समान आधार वाले हो। कवि प्रार्थना करता है कि मैं दुरसा आढा नाम का दीन न तो पडित हू और न चतुर ही। हे प्रभु, प्रतापसिंह, मैं आपकी ही शरण हू।

इन सोरठो में अनेक कल्पनाओ के माध्यम से अन्य नरेशो की तुलना मे प्रताप की विशिष्टता बताते हुए उनकी स्वतत्र भावना की प्रशस्ति और अकबर की निन्दा की गई है।

(2) राव सुरताणरा झूलणा—सिरोही के राव सुरताण दुरसा के आश्रयदाता थे। युद्ध क्षेत्र से घायल अवस्था मे इन्हे पालकी मे ले जाकर सुरताण ने ही इनकी चिकित्सा करवाई थी तथा इन्हे अपना पोलपात (प्रतोली पात्र—जो द्वार पर खडा होकर विरुद पाठ करे और विशिष्ट अवसरो पर दान— नेग —ले।) नियुक्त किया था। सुरताण से इन्हे 'कोड पसाव' (एक करोड के मूल्य का दान— प्रसाद) तथा गाव भी प्राप्त हुए थे। राव सुरताण भी अपनी वीरता तथा स्वातत्र्य भावना के लिए प्रसिद्ध रहे है। ये सवत 1628 (सन् 1571 ई०) मे सिरोही की गद्दी पर बैठे थे। इन्होने जीवन मे 51 युद्ध किए थे और अनेक बार हार कर इन्हे राज्य-त्याग भी करना पडा था। सम्राट अकबर ने सीसोदिया जगमाल को इनके विरुद्ध भेजा था। दत्ताणी नामक स्थान पर हुए उस युद्ध मे सुरताण ने बडी वीरता दिखाई थी। इनकी मृत्यु सवत 1667 (सन 1610 ई०) मे हुई। दुरसाजी ने सुरताण के लिए झूलणे (नीसाणी), कवित्त (छप्पय) आदि अनेक छदो की रचनायें की है।

'झूलना छद के दो प्रकार बताते हुए छद प्रभाकर के रचयिता जगन्नाथ प्रसाद ने इनके लक्षण 29 मात्राओ (7—7—7—5 गुरु लघु अत) तथा 37

मात्राओ (10—10—10—7 यगणात) के दिए है। 'रघुवरजसप्रकास' नामक डिंगल छद ग्रथ म भी इसे 37 मात्राआ का बताया गया है, जिसम बीस मात्रा पर विश्राम रखा है और दो 'सतरा' के बाद अत म गुरु बताया है। इस लक्षण के अनुसार प्रस्तुत कृति 'झूलणा' नही कही जा सकती। इसका लक्षण 'नीसाणी' नामक अय छद से मिलता है जिसके तेईस मात्रायें होती है और तेरह तथा दस मात्राओ पर विश्राम होते हैं। इस 'नीसाणी' छद के बारह भेद गिनाए गए है। झूलणा के नाम से रचित यह छद इसी नीसाणी का 'शुद्ध जागडी' नामक भेद है जिसमे तेरह तथा दस मात्राआ पर यति के साय अत मे दो गुरु हैं। पर यह भी सत्य है कि इन्ही लक्षणो की अनेक रचनायें 'झूलणा' के नाम से ही प्रचलित है, यथा—माला सादू कृत 'महाराजा रायसिघ रा झूलणा' तथा 'झूलणा अकबर पातसाहजी रा'। इससे यह प्रतीत होता है कि 'झूलणा' छद का यह लक्षण समय पाकर लुप्त हो गया और लक्षण ग्रथो के रचयिताओ ने इस ओर विशेष ध्यान नही देकर स्वय के ही लक्षण-उदाहरण गढ कर परपरागत छद नाम का अनुमोदन कर दिया। राव सुरताण के 'झूलणा' छद की एक बानगी निम्न प्रकार है। इसमे 'दत्ताणी' नामक स्थान पर जगमाल सीसोदिया तथा जोधपुर के रायसिह चद्रसेनोत के साथ हुए उनके युद्ध का वणन किया गया है—

सोर धुआ रवि ढकियो अरवद रीसाणू।
नह नह त्रबक बाजिया, त्रीपुर सण्णाणू॥
राणे मन विचार कर कमधज केवाणू।
जो घर जावा जीवता ध्रग जीवण जाणू॥

"बारूद के धुएँ से सूय ढक गया, अबु द पहाड क्रोधित हो उठा 'नह' की ध्वनि से नगाडे बज उठे, तीनो पुर चकित हो गए, (राणा) जगमाल ने मन मे विचार कर राठौड रायसिंह को कहलवाया कि यदि इस युद्ध से लौटकर जीवित घर पहुचे तो जीवन धिक्कार है।"

(3) **झूलणा राव अमरसिंघ गजसिंघोत रा**— जोधपुर के महाराजा [illegible] के ज्येष्ठ पुत्र राव अमरसिंह की वीरता इतिहासप्रसिद्ध है। [illegible] देश निकाला देकर राज्यच्युत कर दिये जाने पर 'शाहजहा' ने [illegible] जागीर देकर अपनी सेवा म रख लिया था। इसी सेवा-काल म [illegible] नामक बादशाही मीरबख्शी को दरबार म अपशब्द कहन [illegible] से मार डाला था। उस समय सारे दरबार म खलबली [illegible] जब किले से बाहर आने लगे तो 'दाराशिकोह' के [illegible] साले 'अजुन गौड' ने इन्ह मार डाला था। अमरसिंह [illegible] समय राठौडा ने बडी बहादुरी का परिचय दिया था। [illegible] प्रशस्तिया तत्कालीन काव्य एव लोक-साहित्य म [illegible]

बैठता है। दूसरे द्वाले के प्रत्यक चरण म 28 28 मात्रायें होती हैं और अत म गुरु होता है। चारा चरणा की तुकें समान होती हैं। ('रघुवरजसप्रकास'' म दिय गए लक्षणा के आआर पर)। दुरसा ने इन लक्षणा की पूर्ति ता की ही है पर पहले द्वाले के चौथ चरण के अतिम शब्द की पुनरावृत्ति कर उसे दूसरे द्वाले के प्रारभ म रखा है। इसी प्रकार प्रथम द्वाले के प्रारभिक शब्द को ही दूसर द्वाले के अतिम शब्द के रूप मे प्रयुक्त किया है। इससे रचना मे आलकारिकता आ गई है।

प्रस्तुत "गजगत' म कुमार अज्जा के वीर कृत्य को विवाह के सागम्पक मे ढाला गया है। रूपको की यह परम्परा राजस्थानी कविया को वडी प्रिय रही है। वीरो का यशवणन करत हुए अनेक प्रकार के रूपको की कल्पना की गई है और उनकी प्रक्रिया के प्रत्यक अश को उपमित किया गया है। रगरेज, किसान, कुम्हार आदि अनेक व्यवसायो को सागोपाग रूप म दरसाया गया है। यह गजगत'' भी इसी प्रकार की एक रूपकबद्ध रचना है। इसका एक छद निम्न प्रकार है—

पटहथ पाखरीजी खेहा डम्मरी।
घोडा घुम्मरीजी, थगनग थरहरी॥
थरहरे थगनग, अळा थरके, मडळ खेहा डम्मरी।
गरवरे डीया, अवर गढपत, सबळ श्री मो सुन्नरी॥
मदमसत कावल, घणा मुगल पछट दे हथ पाघरी।
अजमाल वरवा काज आवी, पवग पटहथ पाखरी॥

'पटट हस्तिया पर पाखर डालकर धूलि से आकाश को आच्छादित करती हुई, घोडा की टापा से पथ्वी को कपायमान करती हुई मवल शत्रु सेना रूपी सुदरी आई ह। दूसरे अनेक गढपति भयभीत हो गए है। इमके मदोमत्त काबुली और मुगल सनिक सीधा प्रहार करन वाले है। ऐसे हाथिया और घोडा से सुसज्जित शत्रु सेना रूपी सुदरी अजमाल' का वरण करने आई है।"

(7) **राजा मार्नासह रा भुलणा**—यह भी दूसरी भूलणा छद वाली रचनाआ की भाति 23 मात्राओ के 'नीसाणी छद मे रची गई कृति है। इसमे समान तुको वाली 23 23 मात्राआ की 12 12 पक्तिया के आठ छद है (कुल 82 पक्तिया)। अतिम म बारह क स्थान पर 10 पक्तिया ही है। सभी क अत म दो गुरु है।

इस रचना मे सामाय रूप स आमेर के कछवाहा राजा मार्नासह' का यश वणन किया गया है। आमेर नरेश भारमल' के पोते तथा राजा भगवतदास के कुमार मार्नासह बादशाह अकबर के विश्वस्त सेनानायका म रह है। इन्होने बाद शाह की ओर से भारतवप म तथा इसके बाहर भी अनेक युद्धा मे विजयश्री का वरण किया। इनकी वीरता वदायता और धम परायणता राजपूत इतिहास मे

सुविख्यात रही है। दुरसा न इनकी प्रशसा करते हुए तत्कालीन क्षत्रिय समाज म इनकी श्रेष्ठता की बात कही है। इस काव्य का एक अश इस प्रकार है —

राकस वस निकदणा एको पति सीता
भार अठार अमूलणा, हको हणवता
सव्व अधार विखडणा एकोइ आदित्ता
एकोइ सेस सहारणा धर मेर सहित्ता
एकोइ गोकुलि कन्हिवा, गिर नक्खग्रहित्ता
एकोइ चदन सेविये वन चदन कित्ता
एकोइ सिसहर नवखडे अमरित सूवित्ता
एकोइ वनि सुवनिया रितिराव फळित्ता
एकोइ जळहर भूवडै, नवखड भरित्ता
एकोइ रिखीअगस्थ है जिण सायर पित्ता
हसती लाख विडारणा, इक सीह कहित्ता
एकण मान महाबळी ससारोई जित्ता

"राक्षस वश का नाश करने वाले एक सीतापति—राम —ही थे। अठारभार-वनस्पति का उन्मूलन अकेले हनुमान ने किया। समस्त अधकार का नाश एक ही आदित्य करता है। अकेला शेषनाग पहाडा सहित धरती को धारण करता है। अकेले कृष्ण ने गोकुल म नख पर गिरिवर का धारण किया। एक चदन का वक्ष ही समस्त वन को सुवासित कर देता है। अकला चन्द्रमा ही नवो खडो म अमत वरसाता है। ऋतुराज अकेले ही वनराजि को प्रस्फुटित कर देता है। अकेले एक जलधर ही वरस कर नवो खडो को जलापूरित कर देता है। अकले अगस्त्य ने समुद्र का पान कर लिया था। अकेला सिह ही अनेक हाथियो को विदीण कर देता है। इसी प्रकार अकेले महाबली मानसिह न समस्त ससार को जीत लिया है।"

(8) **दूहा सोलकी वीरमदे रा**— दूहा —हिन्दी दोहा'— अपभ्र श काल का एक प्राचीन छद है। राजस्थानी म इसके अनेक भेद व नाम कहे गए हैं, यथा— सोरठो खोडो,चाटियाळो, तूबेरी, साकळियो बडो, डोढो आदि। विषय वस्तु की दप्टि से भी इसके कई भेद है, यथा—रग रा दूहा सिधू दूहा, पारिजाभू दूहा, आदि।

राजस्थानी छदाचार्यों ने वण गणना के अनुसार इसके 23 भेद गिनाए है। 'हिंगुलाजदान' कविया ने अपने प्रत्यय पयोधर' नामक छदग्रथ मे दोहे के प्रसार की चर्चा करते हुए इसका अत्यधिक विस्तार दिखाया है। 'दूहा' राजस्थानी कवियो का अत्यन्त प्रिय छद है। शायद ही ऐसा कोई कवि हो जिसने दूहा नही कहा हो। नीति काव्य का तो यह प्रमुख छद रहा ही है पर वीरसतसई' जैसे ग्रथा

मे वीर रस का भी यह विलक्षण वाहक प्रमाणित हुआ है। वास्तव मे 'दूहा' हर प्रकार की रचना का सबल माध्यम है। उर्दू 'शेर' की तरह यह अपने आप मे पूर्ण है। एक समग्र भाव को चित्र की तरह उपस्थित करने मे इसकी टक्कर का दूसरा छंद नही है, यह कहा जाना कोई अत्युक्ति नही होगी। राजस्थानी काव्य का सबसे बडा भाग दूहा म ही समाया हुआ है। विद्वानो की धारणा है कि दूहो की संख्या एक लाख से भी ऊपर सरलता से कही जा सकती है।

कवि दुरसा ने भी दूहो का खुलकर प्रयोग किया है। सोलकी 'वीरमदे' से संबंधित दूहे 'साकलिया' प्रकार के है। इसके पहले तथा चौथे चरणो मे 11-11 मात्राए और दूसरे तथा तीसरे चरणो मे 13 13 मात्राए होती है। पहले और चौथे चरणो की ही तुकें मिलने के कारण इसे *'अतमेल' भी कहते हैं।* इसका अन्य नाम 'बडा दूहा' भी है। युद्ध वर्णन के प्रसगो म इसका प्रयोग प्रभावोत्पादक समझा जाता है। 'साकळ' राजस्थानी मे 'जजीर' या 'अगला' को कहते है। दूहे के गठन से इसके नामकरण का साम्य ध्यान देने योग्य है।

वीरमदे सोलकी ने शाही सेनाओ तथा महाराणा प्रताप और अमरसिंह के बीच हुए युद्धो म बडी वीरता का प्रदर्शन किया था। इतिहासप्रसिद्ध चालुक्य वंश की 'नाथावत' शाखा म उत्पन्न वीरमदे 'सावतसी' का पौत्र तथा देवराज' का पुत्र था। 'दसूरी' (तत्कालीन मेवाड राज्य का एक भाग) उसे महाराणाओ से जागीर मे प्राप्त थी। उसने हल्दीघाटी' के युद्ध म भी भाग लिया था। महाराणा अमरसिंह ने उसे बडा सम्मान प्रदान किया था। उसकी मृत्यु सन 1599 ई० के आसपास ऊटाला दुर्ग के युद्ध म हुई। प्रस्तुत दूहा म मेवाड के युद्धो का ऐतिहासिक विवरण देते हुए दुरसा ने वीरम के बल विक्रम का बहुत सुदर वर्णन किया है। दूहा की एक *बानगी प्रस्तुत है—*

> काळौ कळिहि कठोर, सामतसी दूजो सुदन।
> टीलाइत त्रिभुअण तणो, हू वाखाणसि वीर॥
> जनम हुओ जसराति, नरनाइक मोट नखति।
> वीर भलौ बाधावियो प्रज वैकुठ प्रभाति॥
> दद तणो जिण दीह, वीरमदे दीठो वदन।
> राणिव पोह कीधी रळी, सवळी सामतसीह॥

'कलियुग के पापा का सहार करने के लिए पराक्रमी सिंह सामतसिंह के घर म उत्पन्न इस दूसरे त्रिभुवनपति वीर (वीरम) का मैं बखान करूगा। इस नर नायक का शुभ नक्षत्रो म, यश रात्रि म, जन्म होने पर वैकुठ की प्रजा ने उस प्रभात म खूब *हर्षोल्लास मनाया।* देवराज के इस पुत्र का जिस दिन मुख देखा, उस दिन इसके दादा सामतसिंह ने राज्यभर मे खूब खुशियां मनाईं।"

(9) किरतार बावनी—इस रचना म इक्यावन छद ही हैं और प्रत्येक छद मे

विभिन्न व्यवसायों व लोगों के दुःखों का वर्णन किया गया है। कृषक, मल्लाह, महावत, पत्रवाहक, चोर, पासीगर, पट्टेबाज, वेश्या, भिक्षुक, पहरेदार, गारुडी, भाट, मरजीया, कहार, लोहार, साधू, बाजीगर, मदारी, लकड़हारा, कसाई आदि विभिन्न अभावग्रस्त और दलित वर्ग के दुःखों का सहानुभूतिपूर्ण वर्णन करते हुए कवि ने एक अद्भुत मानवीयता का परिचय दिया है। समृद्धि और ऐश्वर्य में खेलने वाले एवं उच्चस्तरीय कवि को समाज के इस निम्न वर्ग से परिचय प्राप्त करने और उनके दुःखों का अनुभव करने की जो प्रेरणा हुई वह उसकी कविधर्मोचित जागरूकता की साक्षी है।

छप्पय छंद में रचित यह रचना एक प्रकार से दुरसा के उत्कृष्टतम काव्य में से कही जा सकती है। इसके प्रत्येक छंद में दुःखी व्यक्ति द्वारा अपना पेट भरने के निमित्त सह जाने वाले दुःखों का कारुणिक वर्णन किया गया है। एक लकड़हारे का चित्र देखिए—

> जेठ महीना जोर तर्पै तिह दणियर तातो।
> धरती वसदे धखै, महावळ लूये मातो॥
> काळा गिरवर कहर, जोइ तिहा निरधन जावै।
> सिर भारो ले सबळ, धस घर सामा धावै॥
> भार कजोग भेदीयो, भमि पाव पाछा भरे।
> करतार पेट दूभर किया, सो काम एहु मानव करै॥

'जेठ के महीने में जब सूर्य प्रचंड रूप से तपता है, धरती पर आग सी जलती है और वेगपूर्वक लुएँ चलती हैं निर्धन व्यक्ति उस समय तपते पर्वत की ओर जाकर सिर पर बड़ा भार लेकर घर की ओर शीघ्रता से आता है। पर अत्यधिक भार के कारण उसके पाँव पीछे की ओर ही पड़ते हैं। भगवान ने पेट को कठिनता से भरने वाला बनाया है जिससे मनुष्य को ऐसे कठिन काम करने पड़ते हैं।"

(10) माताजी रा छंद—देवी (दुर्गा) के अवतार रूप में प्रसिद्ध चारण देवी 'आवड' की प्रशस्ति में यह कृति रची गई है। कवि ने इसे 'छंद चालकनेस माताजी रो' भी कहा है। 'चालक' नामक राक्षस का संहार करने के कारण देवी का नाम 'चालकनेस' प्रसिद्ध हुआ। 'आवड' नामक चारण कन्या मामड' नामक चारण की सात-पुत्रियों में सबसे बड़ी थी। सिंध के शासक हमीर सूमरा ने उनके रूप पर आसक्त होकर उससे विवाह करना चाहा था। पर आजीवन कौमार्य व्रत धारण करने वाली इस देवी ने सूमरा के राज्य का अंत करके वहाँ भाटियों का आधिपत्य करवाया, ऐसी किंवदंति है। तब से ही यह भाटियों की कुलदेवी के रूप में पूजी जाती है। आवड तूठी भाटियां (अर्थात आवड भाटियों पर प्रसन्न हो गई)— ऐसी उक्ति राजस्थान में प्रसिद्ध है।

प्रस्तुत रचना में कवि ने इस देवी के पराक्रम और माहात्म्य का वर्णन भक्ति

पूर्वक किया है। प्राय प्रत्येक चारण कवि ने इन चारणी देवियो की प्रशसा मे गीत, कवित्त, दूहा आदि की रचना अवश्य की है। इसलिए दुरसा द्वारा भी इस परपरा का निर्वाह किया जाना उसकी आस्था का द्योतक है।

रचना का छद डिंगल छदशास्त्र का 'रोमकद' नामक प्रकार है। इसके प्रत्येक चरण मे आठ सगण' होते हैं और कुल वण चौबीस। (आचार्यो के अनुसार 9 9 8 और 6 वर्णों पर यति होती है। अतिम चरण की, दूसरे छद के चतुथ चरण म पुनरावत्ति होती है। पूरे छद मे 32 सगण होते है।)

उपयु क्त प्रमुख रचनाओ के अतिरिक्त निम्नाकित स्फुट रचनाए भी मिलती है— कवित्त देवीदास जैतावत रा, कवित्त तोगा सुरताणोत रा, कुडलिया देवीदास जैतावत रा नीसाणी हार्थीसिंध गोपालदासोत री, नीसाणी राव सुरताण री, गीत राजि श्री रोहितासजी रो। इनके साथ ही अनेक ऐतिहासिक व्यक्तियो के शताधिक गीत भी उपलब्ध हैं। 'गीत' एक प्रकार की स्फुट रचना है जो कम से कम तीन पदा से प्रारम्भ होकर दसा बीसो पदो तक की हो सकती है। अधिक लम्बी होने पर यह खड का य या प्रबध काव्य का रूप भी ले लती है। अनेक रचनाए 'गीत' के किसी छद विशेष म रची गई है। प्रिथीराज कृत वेलि क्रिसा रुकमणी री' वेलिया गीत म ही रची गई प्रसिद्ध रचना है।

दुरसा की पर्याप्त लम्बी जीवनावधि को देखते हुए इनके गीता की सख्या कई सौ होनी चाहिए। प्रयत्न करने पर दुरसा के रचे अ य गीत भी मिलने सम्भव है, पर सबसे बडी कठिनाई उनकी प्रामाणिकता की है। हस्तलिखित सग्रहो म सुरक्षित गीतो म जहा कही नामोल्लेख प्राप्त हो सकते हैं वही एक मात्र आधार है।

दुरसा ने अपने द्वारा रचित गीसा मे अनेक प्रसिद्ध गीत प्रकारो का प्रयोग किया है, जिनमे से कुछ इस प्रकार है—साणोर (वडो छोटो, खुडद और सोहणो के भेदा सहित), नीमाणी, पखाळो, अरटियो, पालवणी, भाखडी, सावझडो, वेलियो, आदि। इन सभी गीतो के लक्षण डिंगल के छद ग्र था म विस्तार से बताए गए है। गीता के विषय म विशेष ध्यान देने योग्य बात यह है कि ये प्राय किसी ऐतिहासिक व्यक्ति तथा ऐतिहासिक घटना के सबध म कहे गए हैं। इसलिए इन्हें साख री कविता' (साक्षी की कविता) भी कहा गया है। इस प्रकार ये राजस्थान के इतिहास की भी अमूल्य सामग्री हैं। अभी तक इस दृष्टि से इनका अध्ययन नही किया गया है।

विश्वकवि रवी द्रनाथ टगोर ने एक बार कलकत्ता मे एक चारण कवि के मुख से इन गीता का पाठ सुन कर आत्मविभोर होकर यह कहा था कि ये गीत अपनी सरलता सरसता और भावुकता मे सत साहित्य से भी उत्कृष्ट हैं। ये गीत ससार की किसी भी भाषा के श्रेष्ठतम साहित्य से टक्कर ले सकते हैं।' गीता की प्रशसा और भी सुप्रसिद्ध विद्वानो ने मुक्तकठ से की है।

अध्याय 4

भापा और शैली

दुरसा ने जिस भापा मे विविध छन्दो मे रचनायें की है उसे राजस्थानी की 'डिंगल' काव्य शली कहा जा सकता है। राजस्थानी भापा की 'मारवाडी' बाली को कवियो ने डिंगल काव्य के सशक्त वाहन के रूप मे विकसित किया था। इसका मुख्य कारण यह भी हो सकता है कि मारवाडी के विस्तृत क्षेत्र मे ही अधिकाश चारण कवियो का मूल निवास रहा। डिंगल से पूव इस भापा का नाम क्या था यह निणयात्मक रूप से नहीं कहा जा सकता। हा भापाविज्ञानी इस बात पर सहमत हैं कि वह भापा गुजरात तथा राजस्थान मे समान रूप से व्यवहृत थी। आधुनिक विद्वान उसे 'प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी या 'जूनी गुजराती' अथवा 'मारू गुजर' नामो से अभिहित करत हैं। उस सम्मिलित परिवार की भापा का पथक्करण सोलहवी शताब्दी के समाप्त होते होते प्रारभ हो गया था। पर एकाध शताब्दी तक पथक् हुई इकाइया भी सरलता से एक-दूसरे भाग म पढी लिखी जाती थी। यही कारण है कि ईसरदास (सोलहवी शताब्दी) साया झूला (सत्रहवी शताब्दी) तथा दुरसा आढा (सत्रहवी शताब्दी) की रचनायें गुजरात तथा राजस्थान मे समान रूप से प्रचलित थी। दुरसा न नवानगर के कुमार 'अज्जा' के वीरगति प्राप्त करने पर 'गजगत' नामक छन्द मे रचना की थी, यह तथ्य इस धारणा की पुष्टि करता है।

डिंगल की प्रमुख विशेषतायें निम्न प्रकार बताई जाती है—

1 मूधन्य ध्वनि वाले वर्णों का बहुश प्रयाग, यथा—ळ, ट, ठ, ड, ड ढ ण।
2 वर्णो को द्वित्त करने की रीति—क्ज्ज, क्म्म, क्रम्म, ध्रम्म, पळच्चर, मज्झ, पावक्क, उप्पम, जोतिक्क।
3 तणा तणी-तणा, हदो हदी हदा, सदो-सदी सदा, चा चो ची, केरा-केरी केरो जसे सबध कारक परसर्गों का प्रयोग।
4 शब्दा को विकृत करने की रीति—विरळबाण (विद्वान), जुजठ्ठ (युधिष्ठिर)।

5 अनुकरणात्मक शब्दों का बाहुल्य—धडाधड धमाधम, ढमढम, रडब्बड, खडक्खड तडत्तड।
6 करन्ती (करती हुई), पढन्ता (पढता हुआ), चढन्ता (चढते हुए), जस रूपो का गठन।
7 श, ष स—तीनो के स्थान पर केवल दन्त्य 'स' का प्रयोग—श्रावण (सावण) शलाका (सळाख) विष (विस या विख), आशा (आसा), ऋषि (रिसि)।
8 ऋ' के स्थान पर रि का प्रयोग – ऋण (रिण), ऋच्छ (रीछ), ऋतु (रितु)।
9 स्मृ क आदि शब्दों मे आई हुई ऋ' का पथक-पथक रूपो म प्रयोग—स्मृति (समृति सम्रिति), कृति (क्रति), कृपा (किरपा), कष्ण (क्रस्ण क्रिस्ण)।
10 'रेफ' के प्रयोग का विकत रूप—दुलभ (दुग्ळभ), कीर्ति (कीरत) धम (धरम) कम (करम या क्रम), निमल (न्रिमळ, निरमळ)।
11 कही कही ए का हे' मे परिवतन—एकठा—हकठा, एका—हेका एकल—हेक्ल।
12 स का छ म परिवतन तुलसी—तुळछी, अप्सरा—अपछरा।
13 विशिष्ट काव्य शब्दावली का गठन—समाभम (समान) बियो (दूसरा), रायागुर (राजाओ मे श्रेष्ठ), धजबध (ध्वजा धारण करने वाले) तुहाळा (तुम्हारा) त दिन (उस दिन) सुजडी (कटारी) धाराळी (कटारी अभनमो (अभिनव) कमळ (मस्तक)। ऐसे शब्द सैकडो की सख्या म हैं जिन्हे केवल काव्य म ही प्रयुक्त किया जाता है। इन्ही के कारण कुछ विद्वान डिंगल' की काव्य शली को 'डिंगल भाषा' के रूप म मान्यता देना चाहते हैं। वस्तुत डिंगल का मूल ढाचा राजस्थानी व्याकरण का ही है। इसके विशिष्ट प्रयोगो के कारण दूसरी काव्य शलियो स इसका पाथक्य दष्टि गोचर होता है।

भाषा की इस विशिष्ट शली के अतिरिक्त दुरसा की काव्य भाषा मे सस्कत, फारसी, अरबी तुर्की आदि के तत्सम व तदभव शब्दो तथा शुद्ध देशी शब्दो की भी भरमार है। दुरसा के समय तक मुस्लिम सभ्यता और सस्कृति की जडें देश के इस भाग म बहुत गहरी चली गई थी। लगभग छह सौ वर्षों के इस सतत साहचय से जो विदेशी शब्द भाषा म घुल मिलकर सामान्य बोलचाल के अग बन गए थे उनका तो खुलकर प्रयोग हुआ ही है पर दरबारी और सामती सस्कृति के बहुसख्यक शब्द भी आने स्वाभाविक हैं। उपर्युक्त अनकविध शब्दो के कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

तत्सम संस्कृत

सागोपाग कुत अभग, रवि, गिरित्र, वात, भूतल तरुवर मरण, कृपाण, प्रसन्न।

अरबी-फारसी-तुर्की (तत्सम एव तद्भव) शब्द

मजरूत, फत तरफ, ताजा, दरगाह, कलमा, मसीत, नका आलम, नवरोज, आतस, पतसाह, फोज, तखत, सोर हुक्म फरमान, सुरताण, तुरक जग हकीम, सादिम, मरद दुनीयाण खान पैमाल।

तद्भव संस्कृत शब्द

मत्थ (मस्तक) सायर (सागर) माण (मान), राक्स (राक्षस), निकदण (निकदन), सेस (शेष), ग्रहिता (गहीना), अमरित (अमृत), प्रजाळिया (प्रज्वलिता), भाणेज (भागिनेय) सीचीय (सिचितव्यम), विसराम (विश्राम) वरन (वण) दुआरि (द्वारे)।

देशी शब्द

उरडियो, रोद दुरवेस, धमरोळ, धमचक्क, रडब्बड, जाडा, अनड, दाटक, दोयण, धीहडी पधारो, प्राझा। इनमे से भी अधिकाश तदभव है।

जसा कि सभी डिंगल कवियो म दखा गया है दुरसा ने भी काव्य प्रयोगा मे पर्याप्त स्वच्छदता बरती है। सभवत इनका तत्कालीन कवि समाज मे प्रचलन होने लगा था।

कुछ स्वच्छदतायें इस प्रकार है—

1 तुकों के लिए वर्णो को द्वित्त करना—राज ना न ना, भव ना, लग ना, कर ना आदि।
2 वर्णों का दीर्धीकरण या ह्रस्वीकरण—तुझ (तुम्हारे तूझ) पहाड (पाहाड), नखत्र (नाखत्र) समद (सामद), एकोई (एकाइ), प्रासाद (प्रसाद), जमी (जम्मी), नदी (नद्दि)।
3 'ह 'ज' स' आदि वर्णो का पादपूर्ति के लिए निरर्थक प्रयोग।
4 शब्दा की विकति—मही, इळा (महियळ) शशि (सिसहर), दुनिया (दुनियाण), नदी (नदीयाण)।

आशिक रूप से यह प्रवृत्ति मूलत राजस्थानी व्याकरण और भाषा विज्ञान की रही है पर का य भाषा म इसका 'अति' की सीमा तक पहुचाने तथा अनेक दुरूह प्रयोग करने का काम डिंगल कविया ने किया है।

यह सब कुछ होते हुए भी दुरसा के काव्य मे संस्कृत के तत्सम तथा तद्भव

शब्दों का बाहुल्य है। इससे ज्ञात होता है कि उन्होंने अपने पूर्वकालीन कवियों की रचनाओं का अध्ययन किया था तथा स्वयं उन्हें संस्कृत शब्दों का अच्छा ज्ञान था। उस समय तक संभवतः काव्य भाषा अपना संपर्क परंपरागत अपभ्रंश भाषा से बनाए हुए थी जिसमें संस्कृत के तत्सम शब्दों की बहुलता रहनी स्वाभाविक ही है। ग्रामीण क्षेत्रों में जहां आक्रामक संस्कृति का प्रभाव धीरे धीरे ही हो पाता है परंपरागत शब्दावली का चिरकाल तक टिके रहना भी एक तथ्य है। दुरसा ने अपने ग्रामीण आधार से भी इस शब्दावली को प्राप्त किया होगा। दुरसा की भाषा से यह स्पष्ट आभास मिलता है कि वह भारत के पारंपरिक काव्यकारों की सुसंस्कृत एवं परिमार्जित शब्दावली का ही परिवर्तित रूप है। इससे उनके काव्य को देश की काव्य परंपरा से जुड़ा हुआ और उस अक्षुण्ण सांस्कृतिक क्रमबद्धता की एक कड़ी के रूप में देखा जा सकता है। डिंगल कवियों द्वारा किए गए काव्य प्रयोगों की रूढ़ियों को पूर्ववर्ती—संस्कृत, प्राकृत एवं अपभ्रंश भाषा के काव्यों में खोजने से इस परंपरा का पता लगाया जा सकता है।

यद्यपि 'डिंगल' काव्य भाषा के रूप में एक निराली और विशिष्ट भाषा थी, पर प्रतिभासम्पन्न कवि उसमें भी लौकिक तत्त्वों का कुशलतापूर्वक समावेश कर सकते थे। इस प्रकार के लोक प्रचलित प्रवादों, लोकोक्तियों और मुहावरों से भाषा अधिक सक्षम एवं प्राणवंत हो उठती है। दुरसा इस तथ्य के प्रति पूर्णतया सजग लगते हैं। उन्होंने बड़े सहज भाव से अनेक स्थानों पर ऐसे लोकप्रचलित प्रयोग किए हैं जो उनकी समग्र भाषा से कटे छंटे नहीं लगते हुए उसी ढांचे में एकाकार हुए प्रतीत होते हैं। ऐसे कुछ उद्धरण द्रष्टव्य हैं—

मुहावरे—

काजळ री कोर (काजल की कोर), जोखम पूरि (पूरा खतरा) वाय कुवाय (अच्छी-बुरी हवा), रज राखे रजपूत (क्षत्रिय क्षात्रधर्म का निर्वाह करता है) खेलसिर ऊपर खेले (सिर के बल पर खेल खेलता है), नयणे मेले नयण (आंख में आंख गड़ाकर), भर जोवन (पूर्ण यौवन में), सोळ सिणगार (सोलह शृंगार) महमातौ झड़ मांडे (पूरे वेग से वर्षा की झड़ी लगती है), धोबा भरिभरि धूळ (दोनों हाथों की अंगुलियों में रेत भर कर)।

कहावतें—

'जिण रो जस जग मांय जिण रो जग धन जीवणो'
(संसार में जिसका यश हो उसका ही जीवन धन्य है।)
'सफळ जनम सुदतार सफळ जनम जग सूरमा
(अच्छे दानवीरों और शूरमाओं का जीवन ही सफल है।)

'गढ ऊचा गिरनार' (गिरनार का पर्वत बहुत ऊंचा है।)
'रघुकुल उत्तम रीत' (रघुकुल की रीति बडी उत्तम है।)
'पराधीन दुख पाय' (पराधीन रहने वाला दुख पाता है।)

भाषा म इस प्रकार के लोक-तत्व के समावेश म यह अनुमान लगाया जा सकता है कि कवि बहुश्रुत था और समाज क विभिन्न वर्गों स उसका निकट का साहचर्य ही नही उनका सूक्ष्म अध्ययन भी था।

दुरसा की काव्य शैलियो म पारपरिकता का निवाह ही अधिक है। उत्तर डिंगल काल मे सूर्यमल्ल ने जिस प्रकार 'वीर सतसई' मे शलीगत प्रयोग किया, अथवा दुरसा से पहिले ईसरदास ने किया, वैसी कोई नई शलीगत उदभावना तो नही दिखाई दती, लकिन दुरसा न अपनी कल्पनाओ, उदभावनाओ और प्रतिभा के मेल से अन्य प्रकार से अपने काव्य को उत्कृष्ट कोटि का बनाने म कोई कसर नही छोडी है।

दुरसा के काव्य म मुख्य रूप से शैलीगत प्रयोग निम्न प्रकार पाय जाते ह—

(1) सबोधनात्मक विरुदप्रधान शली—जिसे डिंगल काव्य शास्त्र के आचार्यों न सनमुख उक्त (सन्मुख उक्ति) भी कहा है—

मान, बडा पख ताहरा, बर्व विरदाळा।
तू आबेर उजाळणा, जुग जेण उजाळा॥
छत्तीसा ठकुराइया, तू मान वडाळा।
माना वडडा तुझझ थ गिरधरण गुवाळा॥

"ह मानसिंह, तर दोनो ही पक्ष (मातृ एव पितृ पक्ष) बडे यशस्वी ह। तू आमेर क यश को फलाने वाला है, तेरा यश सारे युग मे व्याप्त है। तू छत्तीस राजवशा म सबसे बडा है। तुझसे बडा तो गिरिधर ग्वाल (कृष्ण) ही है—अथवा गिरिवर धारण करने वाले गोविंद न तुझस ही बडप्पन पाया है—(यह सकेत सभवत मानसिंह द्वारा वृन्दावन म बनाए गए गोविन्ददेव के विशाल मदिर के कारण किया गया है।)"

(2) सामान्य प्रशस्तिपरक शली—जिस 'परमुख उक्त' भी कहा गया ह—

सालव सहत सनाह, पमग महता पाखरी।
ढाला सू मगळ मुगल, बीरम की हथवाह॥

"कवच सहित शत्रुओ, पाखर सहित घोडा तथा ढाला स ढके हाथियो और मुगल सनिको पर बीरम न खड्ग प्रहार किया।'

(3) मरसिया (शोक-काव्य) शली—यह किसी काव्य-नायक की मृत्यु क उपरात उसके गुणो का स्मरण करत हुए कहा जाता है—

महासूर सुदतार रायसिंध बिमरामिया।
बिढण कुण क्वारी धडा बरसी॥

कूजरा तणो माहतार करगी क्रण।
क्वण कोडां तणो माज करसी।।

'महान वीर तथा बड़े दानी रायसिंह ने (मत्युजय) विश्राम ग्रहण कर लिया। अब सेनारूपी कुमारी का युद्धस्थल में कौन वरण करेगा? हाथियों की बख्शीश कौन करेगा और करोड़ पसावा का दान कौन देगा?"

(4) रूपकात्मक शैली— रूपक अलंकार के माध्यम से वर्णन करने की रूढ़ि डिंगल कवियों को बड़ी प्रिय रही है। दुरसा ने भी इस रीति का खुलकर प्रयोग किया है। सांग और निरंग रूपकों की छटा उनके काव्य में स्थान स्थान पर दृष्टिगोचर होती है। "कुमार अज्जाजी नी भूचर मोरी नी गजगत" नामक रचना तो सम्पूर्ण रूप से विवाह के रूपक में ही आबद्ध है। 'रामदास चान्दावत' के एक गीत में 'मरण रूपी पाहुन की मनुहार करने का रूपक बांधा है। एक अंश निम्न प्रकार है—

परठि वागो जरद, गरद सूधो पहरि,
मिलण कजि साथि ले, वडवडा मीर।
प्राण तो निको अंत, आविया प्राहुणो,
वीरहर आभरण, ऊठि वरवीर।।

'वागा धारण कर, और गर्द ढका हुआ ही कवच पहिन कर बड़े-बड़े अमीरों को साथ ले मिलने के लिए चलो। प्राण का अन्त करने वाला 'मरण' पाहुन बनकर आया है, हे वीर के पौत्र, (कुलके) शृंगार श्रेष्ठ वीर, उठो!"

(5) परिगणनात्मक शैली—प्रशस्तिपरक काव्य में उपमाओं की झड़ी-सी लगाने की रीति से उपमेय के गौरव में वृद्धि करने की रीति अपनाई गई। पौराणिक और इतिहासप्रसिद्ध व्यक्तियों से समानता या विशिष्टता बताने वाले ऐसे वर्णन वैसे तो अलंकार संयोजन के अंतर्गत आते ही हैं, पर यह शैली विशेष कवि की प्रिय होने के कारण इस रुढ़ि के रूप में अपनाया गया है। जहां अलंकार संयोजन नहीं है वहां भी नाम परिगणना की यह रीति अपनाई गई है—

हो मीरा, हा मीरजा खाना, सुरताणा।
हो रावा, हा रावता हो रावळ राणा।
हो तुरका, हा हिंदुवा दाखा दीवाणा।
छरा न लग्गी मानकी, कुण तास घराणा।।

'चाहे मीर हो मिरजा हो, खान या सुल्तान हो, राव हो रावत हो या रावल और राणा हो, तुर्क हो, हिंदू हो या दीवान कहे जाते हो मानसिंह का प्रहार जिस पर नहीं हुआ हो, ऐसा कौन सा घराना है?"

मानसिंघ रा झूलणा नामक प्रशस्ति काव्य मे तो आदि से अंत तक इसी परिगणनात्मक शैली के सहारे ही यशोगान किया गया है।

(6) **चित्रात्मक शली**—इस शली स किसी घटना, काय व्यापार या व्यक्ति का एक चित्र सा खीचने का प्रयास किया गया है। वे एक ही साथ दिखाई दने वाले हो अथवा लम्बी अवधि के विस्तार मे व्याप्त हो, समस्त कार्य को चित्रकार की तूलिका की भाति, रेखाओ म समेट कर रख दने की यह कला प्रतिभासम्पन्न कवियो के ही वश की बात है। दुरसा ने ऐसे अनेक चित्र बडे स्वाभाविक रूप स खीचे है—

हूकळ पाळि उरडियो हाथी,
निछटी भीडि निराळी।
रतन पहाड तण सिररोपी,
धूहडिय धाराळी॥

हुकार करता हुआ हाथी द्वार की ओर वेगपूवक आया तो भीड तितर-वितर हो गई। 'धूहड' के वशज 'रतनसिंह ने पहाड रूपी हाथी पर अपनी तलवार से प्रहार किया।"

इसम मस्त हाथी के वगपूवक आने, भीड के तुरत भग जाने और एक सच्चे वीर के खड्ग प्रहार का स्पष्ट चित्र उभर उठता है। यह चित्रोपमता प्राय डिंगल कवियो के वणनो म मिलती है। किरतार बावनी' नामक काव्य म भी विभिन्न व्यवसायो का समस्त काय व्यापार चित्रवत खीचकर रख दिया गया है—

रितु वरसाळा राति, घोर अधार होय घण,
बीज चमक्के वळें, महझड माचि सरावण,
चार अरध निस चाल, वार धनवत रै बैसै,
भेदै पत्थर भीत, पनग ज्यू माहे पस,
गाम रो धणी तिण न ग्रहै, धड साजे सूळी धर
करतार पेट दूभरि किया, सा काम एह मानव कर॥

'वर्षा ऋतु की रात्रि म जब घनघोर अधकार रहता है, ऊपर स बिजली चमकती है और श्रावण महीने की झडी लगी रहती है, एसे समय म आधी रात का चलकर चार धनिक व्यक्ति के दरवाजे पर जाकर बठता है। पत्थर की बनी भीत को बेधकर सप की तरह उसमे प्रवश करता है। पर गाव का स्वामी उस पकडकर धड सहित सूली पर रख दता है। भगवान् न पट भराई बडी कठिन कर दी है जिसम मनुष्य को ऐसे काम करन पडत हैं।"

एसे वणना म कोई भी रसज्ञ भावक सम्पूण काय-व्यापार को चलचित्र की तरह आखो म उतार सकता है।

(7) **उदबोधनात्मक शली**—वीर काव्य ही डिंगल कवियो का उपजीव्य था। अत क्षत्रियो को वीरोचित कृत्य के लिए प्रोत्साहित करना उनका प्रधान लक्ष्य रहा है। इस काम म उद्बोधनात्मक शली विशेष सहायक होती है। युद्ध-

स्थल म वीरवचना द्वारा प्रेरित करना तो एक रोमाचकारी काय है ही, पर अय प्रसगा पर भी अयाय, अत्याचार आदि के विरुद्ध आक्राश उत्पन करने के अवसर भी कविया न चूके नही। दुरसा ने भी शैली के रूप म इस अपनाया है। सोलकी माला सामदासोत के गीत म ऐसा ही प्रेरणास्पद उद्बोधन द्रष्टव्य है—

पड भार मवाड पतिसाह पारभीया,
भाखरा ऊपरै झिग भाला।
अमर रा भीच जमराय ता ऊपरा,
मडाअर आवियो, ऊठ माला ॥

मेवाड पर सकट आ गया है, बादशाह ने युद्ध प्रारभ कर दिया है, पवता पर भाले चमक रहे हैं, अमरसिंह के प्रबल वीर तुझ पर यमराज स्वय आ गया है, हे माला, उठा।'

डिगल काव्य शास्त्र के आचार्यों ने शली (उक्ति) के अनक प्रकार व्याख्यायित किए हैं। सम्मुख, परमुख, परामुख स्रीमुख और मिश्रित नामक इन उक्तिया म प्रथम तीन के शुद्ध और गर्भित तथा स्रीमुख के प्रसग म कल्पित, इस प्रकार नौ भेद होते ह। य उक्तिया प्रकारान्तर से काव्य शलिया ही कही जा सकती ह। इनम से प्रथम दो को अयत्र विवचित किया गया है। डिंगल गीता की रचना प्रक्रिया मे 'उक्ति' की तरह ही 'जथा' नामक शिल्प भी बताया गया है। य जथायें ग्यारह प्रकार की होती है। जथा स तात्पय कथ्य के यथानिदिष्ट निर्वाह से है। उदाहरण के तौर पर 'सर' नामक जथा' के अनुसार गीत के दोहों की पहली तीन तुका म जो वणन किया जाए उसका पूण निर्वाह प्रत्येक दोहे की चौथी तुक म हाना चाहिए। गीता का यह शिल्प विस्तत विवचन की अपेक्षा रखता है। दुरसा ने एक कुशल गीतकार के नात निश्चय ही इस काव्य शिल्प का बखूबी निर्वाह किया है।

अध्याय 5

शिल्प और तत्त्व

छद—दुरसा न सभी रचनायें परपरागत छदा म की हैं। दोहा, सोरठा, छप्पय आदि छदा के अतिरिक्त डिंगल गीता के अनेक प्रकारा का प्रयोग किया गया है। नीसाणी, झूलणा, भाखडी, सावझडा, छोटो साणोर, पखाळो, दुमेळ, पालवणी, रूपग, गजगत, खुडद साणोर, वडो साणार, वलियो, प्रहास, अरटिया आदि गीतो के कुछ प्रमुख भेद है जिनम इनकी रचनायें हुई ह। दूहा म भी 'सावळिया' नामक भेद म 'वीरमदे' सोलकी रा दूहा' की रचना को गई है। डिंगल छद शास्त्र म इन सभी भेदो के लक्षण विस्तारपूवक बताये गए है। य लक्षण दुरसा कृत गीता मे भी ठीक बैठते है। उदाहरण क तौर पर यहा किसना आढा कृत 'रघुवरजस प्रकास' नामक छद ग्रथ से कुछ छदा के लक्षण दकर दुरसा के गीता की परीक्षा की जाती है—

रघुवरजस प्रकास' (पृ० 219) म लिखा ह कि सालह पक्तियो के छद की पहली पक्ति जब उन्नीस मात्रा की हा तथा शेप 15 पक्तिया सालह सालह मात्राआ की हो, तुकात मे गुरु लघु का नियम न हा, और हर चार पक्तिया की तुकें मिलें, तो 'पालवणी नामक छद होता है।

'पालवणी (गीत गोपालदास सुरताणात रो)

वहणा सुजस तणै रवि बाइ=16 मात्रा
दूजा नका तुहाळी दाइ=16 मात्रा
तू समपै सौ गामा ताइ=16 मात्रा
पडलो एक किसू तो पाइ=16 मात्रा

इस छद म, जा 'पालवणी' क प्रारभ का छोडकर शेप अश का एक भाग है, प्रत्यक पक्ति म सालह मात्रायें है तथा चारा तुकें भी मिलती ह।

'खुडद साणोर'—(रघुवरजस प्रकास—पृ० 204 205)

जिस छद का पहला चरण 18 मात्राआ का दूसरा 13 का, तीसरा 16 का तथा चौथा 13 मात्राओ का हा और शेप सभी चरण क्रमश 16 13 के हो, वह

'छोटा साणोर ह सगमा' कहलाता है। तुकात म दो लघु होते हैं। इसे ही 'खुडद साणोर' भी कहते हैं

(गीत देवडा प्रथीराजजी रो)

ताढा प्रति ऊ हो माठा ती हो—	=	18
सबदी उलट अवब सिव	=	13
प्रिमणा रुधिर खीजिया पूर्जे	=	16
पीयल त्या रीझ पुहिव	=	13
स नाहिए भडे सूजावत	=	16
रिमच सिरि रेड रगत	=	13
नाव दाइ साध कढि नारी	=	16
भाव ता सरिखा भगत	=	13

इन पक्तियो म गीत के उपयुक्त लक्षण बिल्कुल सही उतरत हैं। इसी प्रकार अय सभी छदो की परीक्षा करने से भी पता चलता है कि दुरसा का छद शास्त्र का अध्ययन सागोपाग था तथा छद बनान का उनका कौशल उच्च कोटि का था। डिंगल छदो की इतनी विविधता के होते हुए किसी भी सिद्धहस्त कवि को नए छ दो की आवश्यकता नहीं पड सकती थी। हा, अप्रचलित छदा का प्रयोग एक अ य प्रकार की क्षमता की अपेक्षा अवश्य रखता है। दुरसा ने 'गजगत तथा 'रामवद' जसे छ दो का प्रयोग करके इस सामथ्य का भी प्रदशन किया है। पर यह बात याद रखन की है कि दुरसा अत्यधिक लोकप्रिय कवि थे, अत उनके द्वारा अधिकाशत अधिक प्रचलित छदा म ही रचनायें की गई है। दूहा, सोरठा, छप्पय, साणोर (सभी भेदा म) तथा सावझडा एसे ही छद थ जिनका तत्कालीन कवि समाज मे बडा प्रचलन था। यही छद दुरसा के भी प्रिय थे।

शब्दालकार

डिंगल के काव्य शास्त्र मे सबसे प्रधान शब्दालकार 'वयण सगाई' कहा गया है। यह एक प्रकार का अनुप्रास होता है जिसम वण की अनक बार उपयुक्त आवत्ति से वणन म सौ दय वृद्धि होन की बात मानी गई है। रघुवरजस प्रकास' नामक छद ग्रथ म इस अलकार का लक्षण बतात हुए कहा गया है कि छद क किसी भी चरण के पहले शब्द के आदि अक्षर की आवृत्ति उसी चरण क अतिम शब्द के आदि अक्षर मे हो तो वयण सगाई' अलकार होना है। वयण (वचन) सगाई (सबध) की अयमूलक व्याख्या उसके बाह्य रूप स ही सबध रखती है। इसे एक प्रकार का अनुप्रास ही कहा जा सकता है। इस महत्त्वपूण अलकार के अनेक भेद किए जाते हैं। आदि अक्षरा की भाति जब मध्य और अत्याक्षरो का आदि से सबध होता है तो दूसर-तीसर भेद मान जात है। मुख्य भेद सात ही माने गए

हैं, पर प्रस्तार के द्वारा शताधिक भी करके बताए जाते हैं।

'वयण सगाई' सिद्धहस्त कवियों की रचनाओं में आनी ही चाहिए ऐसी मान्यता रही है। पर, इसके विपरीत सूयमल्ल मिश्रण जैसे प्रतिभासंपन्न कवि ने 'वयण सगाई' की अनिवार्यता को नकारा है। उनका कहना है कि वीर काव्य की पावक में यदि 'वयण सगाई' को समाप्त भी कर दिया जाए तो कोई दोष नहीं, बल्कि रस का पोषण ही होगा—

वणसगाई वाळियां पेखीजै रस पोस।
वीर हुतासण बोन म, दीसे हैक न दोस॥

पर 'वयण सगाई' को नकारने वाला यह दोहा स्वयं उत्तम प्रकार की 'वयण सगाई' का श्रेष्ठ उदाहरण है। वास्तव में, वयण सगाई के बिना भी प्रभावकारी वर्णन संभव तो है, पर यह भी निश्चित है कि वयण सगाई के प्रयोग से किसी भी वर्णन की सौन्दर्य वृद्धि तो होनी ही है। 'रघुनाथरूपक' नामक छंद ग्रंथ के रचयिता 'मंछ' कवि ने यहां तक कहा है कि वयण सगाई का प्रयोग होने पर दूसरे काव्य दोष ढके जाते हैं। जिस प्रकार वंश परंपरा का वर भी विवाह-संबंध से सदा के लिए मिट जाता है, उसी प्रकार वयण सगाई से किसी भी प्रकार के दग्धाक्षर आदि के दोष भी मिट जाते हैं—

सून किया जाण खलक, हाडवर जो होय।
वण सगाई वण तो, फळपत रहे न कोय॥

ऐसे महत्त्वपूर्ण अलंकार का दुरसा के द्वारा सम्मानित होना आवश्यक ही था। उनकी कुछ रचनाओं से इस अलंकार के समावेश की पंक्तियां देखिए—

'सेना अणी सिनान, धारा तीरथ में धसे'
(विड़द छिहत्तरी)

जिके मरजिया जात, पूर सायर में पेस।
माग तन रो मोल, बाधि कड जळ तळ बेस॥
(किरतार बावनी)

हूकळ पाळ उरडियो हाथी, निछटी भीडि निराळी।
रतन पहाड तणै सिर रोपी धूहडिया धाराळी।
(रतन महेसदासोत रो गीत)

अन्य शब्दालंकार—यमक श्लेष वक्रोक्ति आदि की ओर डिंगल आचार्यों ने विशेष ध्यान नहीं दिया है। किंतु छेक, वृत्ति, श्रुति और अंत्य नामक अनुप्रासों से उनका मोह अवश्य रहा है। 'वयण सगाई' भी एक प्रकार से 'छेकानुप्रास' ही है। वृत्यनुप्रास भी बहुश प्रयुक्त हुआ है। एक वर्ण की अधिक बार अथवा अनेक वर्णों की अधिक बार आवृत्ति करने से बनने वाले इस अनुप्रास से बनने वाली 'उपनागरिका' 'परुषा' और 'कोमला' नामक वृत्तियों में से 'परुषा'

ही डिंगल कवियों का विशेष प्रिय रही है। इस वृत्ति के वर्ण—ट, ठ, ड, ढ, रफ सहित संयुक्ताक्षर और द्वित्त आदि—वीररस के वर्णनों के लिए उपयुक्त समझे गए हैं। दुरसा ने भी परुषा वृत्ति के उपयुक्त विधान की पालना करते हुए प्रचुर रचनायें की हैं। एकाध उदाहरण से यह मत स्पष्ट हो सकेगा—

ग्रीध झडपड पखझड हुव पीर हडवड।
भीच अण घड वाज धड हाय रुड रडवड॥
(राव सुरताण रा झूलणा)

मालद जूठिया दूठ वेढीमणो,
ताधिवा नरसमद सार अणताघ
भुजाडंड आडवे फौज अूडळ भर,
वला जागळ हुवा—बला रा वाघ॥
(सोलंकी माला सामदासोत रा गीत)

उपर्युक्त दोनों उद्धरणों में 'ड' वर्ण की अनेक बार आवृत्ति से ओजगुण की परिचायिका परुषा वृत्ति का निर्वाह हुआ है। प्रसंगवश उपनागरिका और कोमला वृत्तियां भी काम में ली गई हैं, यथा—

नवली सुंदरि नार, महा अति रूप मनोहर'
(उपनागरिका)
"वाहण चोरिय वस्त, चोर मिलि चारण चाल।'
(कोमला)

यहां आनुनासिक और मधुर ध्वनि वर्णों के कारण 'उपनागरिका' और कठोर वर्णों के अभाव के कारण 'कोमला' वृत्ति कही जाएगी।

उकत, जथा और दोष—

काव्य शास्त्र के आचार्यों द्वारा श्रेष्ठ काव्य की जो अन्य कसौटियां उकत (उक्ति), जथा (पुनरुक्ति) तथा काव्य दोषों का निवारण बताई गई है।, उनका भी पूर्णतः निर्वाह दुरसा के काव्य में मिलता है। उक्ति के भेदों—सनमुख परमुख स्त्री मुख मिश्रित, तथा शुद्ध एवं गर्भित आदि विभेदों—की विवेचना इस पुस्तक में अन्यत्र की जा चुकी है। इसी प्रकार ग्यारह जथाओं तथा ग्यारह दोषों की भी चर्चा लक्षण ग्रंथों ने की है। कुछ प्रमुख जथायें और दोष निम्न प्रकार वर्णित है —

वरण-जथा —*जहां नख से शिख तक तथा शिख से नख तक वर्णन हो उसे* 'वरण जथा' कहते हैं।

'अहिगत जथा —जिस गीत के प्रथम चरण के प्रारम्भ में जिस पदार्थ का वर्णन हो, उसका संबंध चरण के अंत में भी स्पष्ट हो तथा वर्णन सर्प की गति की तरह चले, वे 'अहिगत जथा' होती है।

'अधिक जथा'—जहा वणन म क्रम से अधिक से अधिक वणन हो अथवा एक दो तीन चार—इस प्रकार सख्यानुसार क्रमश वणन हो, वहा दोनो प्रकार की अधिक जथायें होती है।

ग्यारह काव्य दोषो के नाम—अध, छबकाळ, निनग, हीण पागळो, जात-विरुद्ध अपस नाळछदक पखतूट बधिर, अमगळ है। जिस छद म एक से अधिक भाषाओ क शब्दो का प्रयोग हो वहा 'छबकाळ', जहा नायक के माता पिता का नामोल्लेख न होने स पहिचान म भ्रम हो वहा हीण तथा जहा वणन की आनुक्रमिकता का निर्वाह न हो पाए वहा 'निनग' दोष होता है। इसी प्रकार शेष दोषो की भी व्याख्या की गई है।

दुरसा के काव्य का बारीकी से अध्ययन करने पर ही इस विषय म निर्णयात्मक रूप स कहा जा सकता है पर सरसरे ढग स देखने पर ऐस कोई दोष नही पाए जात। यदि उक्त, 'जथा दोष' तथा छद शास्त्र की अन्य अनिवार्यताओ को लेकर दुरसा क काव्य म कही कोई कमी पाई जाती, तो कवि समाज निश्चय ही उन्हे वह सम्मान नही देता जो उन्हे प्राप्त था।

अर्थालकार

डिगल कवियो के प्रिय अर्थालकारो म उत्प्रेक्षा उपमा रूपक अन्वय, उदाहरण, उल्लेख, सदेह व्यतिरेक अतिशयोक्ति, दृष्टात आदि के नाम गिनाए जा सकते है। रूपक इनम सभवत सर्वप्रथम स्थान का अधिकारी है। वीरो के युद्ध वणना म अनेक प्रकार के रूपको की कल्पनायें की गई है। दुरसा द्वारा प्रयुक्त कुछ प्रमुख अर्थालकारो के उदाहरण निम्न प्रकार है—

'रूपक'

(उपमान मे उपमेय का निषेधरहित आरोप)

अकबर समद अथाह, तिह डूबा हिदू तुरक।
मेवाडो तिण माह पायण फूल प्रतापसी।।

(विरुद्ध छिहत्तरी)

"अकबर रूपी अथाह समुद्र म सभी हिन्दू-तुर्क डूब गए है, पर मेवाड का राजा उसम कमल पुष्पवत तरता है।"

व्यतिरेक

(उपमेय मे उपमान की अपेक्षा उत्कर्ष का कथन)

अण अथिम अमिट राह अणग्रह अत
अवडे पह बादळे अपाल

जगत तपै मिर दूजो जगचख,
जस जगमगै तणो जगमाल ॥

"जगमाल का यश ससार पर दूसरे सूय की तरह जगमगाता है। यह अस्त नहीं होता इसकी राह अमिट है इसे राहु नहीं ग्रसता और बादलों से यह ढका नहीं जाता"—यहा वास्तविक सूय की अपेक्षा नायक के यश रूपी सूय की विशेपता बताई गई है।'

अत्युक्ति

(शौय और औदाय का अत्यत मिथ्या वणन)

अहू माथ राग आभ लग ऊचो।
नवखडे जस झालर नाद
रोप्या भला रायपुर राणा
पडै न सासण तणा प्रसाद
(राणा अमरसिह रो गीत)

शेप नाग के सिर पर जिसकी नीव है, जो आकाश तक ऊचा है, नवो खडा म जिसकी यश रूपी झालर का निनाद सुन पडता है, ऐम 'शासन" रूपी महल को राणा ने रायपुर मे बनवाया '—यहा शेप नाग, आकाश और नवो खडो की असभवताओं के कारण औदायसूचक अत्युक्ति है।

दुरसा जसे प्रतिभासम्पन्न कवि के काव्य म स्यान-स्थान पर अलकारा की छटा प्राप्य है। अलकार शास्त्र का कोई भी विद्यार्थी सरलता से इनमे अनेक अलकारो के अच्छे उदाहरण खोज सकता है। डिंगल कविया की वणन शली भारतीय आप काव्य परपरा से जुडी रही है। इनके द्वारा प्रयुक्त रूढियो के स्रोता की खोज करने के लिए प्राचीन सस्कृत, प्राकृत तथा अपभ्र श काव्यो का परिशीलन मनोयोग पूवक किये जाने की आवश्यकता है।

रस—

डिंगल काव्य का प्रधान रस वीर' ही है। दानवीर धमवीर, युद्धवीर आदि इसके अग हैं। वीर रस के वणनो म ही रौद्र, वीभत्स, भयानक, अदभुत और करुण रसों की, अगीभूत रूप म, झलकिया दिखाई गई हैं। यह एक विचित्र सत्य है कि डिंगल कवियो ने शृगार के मिस भी वीर रस का वणन करने म अद्भुत सफलता प्राप्त की है। 'सूयमल्ल' की 'वीरसतसई इस दिशा म एक श्लाघनीय प्रयास कहा जा सकता है। मध्यकालीन राजस्थानी समाज म, जब घाडा, तलवार और सनिक का वचस्व था, ऐसा ही काव्य श्रेष्ठ समझा जाता था। और फिर चारण कविया का लक्ष्य क्षत्रियोचित गुणा क उत्कप का प्रोत्साहित करना

ही होने के कारण इस प्रकार के काव्य का सम्मान की दृष्टि स पढ़ा सुना भी जाता था। सभवत तत्कालीन क्षत्रिय समाज को इसकी आवश्यकता भी थी। इसके अभाव म उन्ह वाछित प्रेरणा और कीर्ति का वरण करने की अभीप्सा नही होती। दूसरा प्रधान रस "शात ही है जिसम हर कवि ने भगवद्भक्ति विषयक रचनायें की हैं।

दुरसा के काव्य स उपर्युक्त विभिन्न रसा की वानगिया प्रस्तुत करने का प्रयत्न यहा किया जा रहा है —

युद्धवीर

कर पारस इम बोलियो तजल सुरताणू।
आज न मेलू जीवता, करवाण रगाणू॥

"पौरुष करके तेजस्वी सुरताण ने इस प्रकार कहा कि आज मैं जीवित नही जाने दूगा, तलवार से रग दूगा"—'राव सुरताण रा झूलणा'

धमवीर

गीत

कलमा वाग न सुणिय काना, सुणिय वेद पुराण सुभ।
अहडो सूर मसीत न अरच अरच देवल गाय उभ॥3॥
असपत इद्र अवनि आहुडिया धारा झडिया सहै धरा।
घण पडिया साकडिया घडिया, ना धीहडिया पढी नका॥4॥
आखी अणी रहै अूदावत साखी आलम कलम सुणो।
राणै अक्बर वार राखियो पातल हिन्दूधरमपणा॥5॥

राणा (प्रताप) अपने काना स यवना की 'वाग' नही सुनता, पर वदपुराणा के उपदश सुनता है। वह वीर मस्जिद म सिजदा नही करता बल्कि दव-मदिर और गाय की पूजा करता है। इन्द्र रूपी बादशाह जब जब पृथ्वी को आक्रात करने के लिए शस्त्र प्रहार की झडिया लगाता है तो राणा उसे सहन करता है। पर सकट का इन घडिया म भी अपनी पुत्रिया को बादशाह के साथ निकाह पढने के लिए नहा भेजता। उदयसिंह के उस पुत्र ने सदव सना का नायकत्व किया। इस बात का साक्षी सारा ससार और स्वय मुसलमान भी हैं कि प्रताप न अक्बर के समय म हिदू धम की मर्यादा बनाई रखी।"

दानवीर

महाराजा रायसिंह रो गीत

पदमण महल पोढता पहलौ,
ऐरावत देता इक आग।
इळपत रासै चित आलोचे,
नगनग पैडी दीधा नाग॥

'पद्मिनी के महलो म शयन करने जाते समय पहिले के नरेश एक हाथी का दान किया करते थे, पर राजा रायसिंह ने उदारभाव से हरेक सीढी पर एक एक हाथी का दान किया।"

वीभत्स रस

"रत्त गड गड सोख मड प्रजळाण खडखड"
"ग्रीध झडपड पखझड हुव वीर हडवड'
"भीच अणपड बाज धड हुव रुड रडवड"

इन पक्तियों मे मत शरीरो से रक्त का पान, गद्धो के पखो के झपाटे, धडो और रुडो का गिरकर लुढकना आदि युद्ध व्यापार वीभत्स दृश्य उपस्थित करते हैं। राव सुरताण रा झूलणा'

करुण रस

राव सुरताण रा कवित्त

आज पडे असमान, आज धर-कक्कण भागो,
आज महाउतपात, नीर धूतार लागा।
आज मळ, ऊथल्ल, आज कव आदर छूटा,
आज टळे आसग, आज सनमध बिछूटा॥
"सुरताण मरण फूटा नहीं, हाय हाय फूटो हियो"

'आज आकाश नीचे गिर गया है, पृथ्वी का कक्कण फूट गया है—वह विधवा हो गई है, आज महान उत्पात मे समस्त ससार म जल प्रलय हो गया है, पानी ध्रुव तक पहुच गया है, आज सारे ससार म उथल-पुथल मच गई है, आज कवियों का सम्मान लुप्त हो गया है, आज प्रसन्नता जाती रही है, सबध टूट गया है। आज सुरताण की मृत्यु पर भी ह हृदय तू फटा नही, तू निरा अधा है।"

रौद्र रस

> सोर धुआ रवि ढकिया, अरवद रीसाणू ।
> त्रह त्रह त्रबक वाजिया, त्रीपुर सण्णाणू ॥

"बारूद के धुओ से आकाश आच्छादित हो गया है, अबुदाचल क्रोधित हो उठा है, ''त्रह'' की ध्वनि करते हुए नगाडे बज उठे हैं, तीनो पुरो मे भयत्रस्तता छा गई है ।"—"राव सुरताण रा झूलणा"

शात रस

किरतार बावनी

> विपम ताढि बापरी, जिका वन नीला जाळे,
> तख खिण अरहट तेथि, हेम नीक जळ हाळे ।
> परठ पाणी ती पुरख, पाव पाणी करि प्यारा,
> दुख देही दाखवै, कसी सू वाळै क्यारा ।
> सीत रै जोर जळ सेवता, धड धूज कपवा धर,
> करतार पेट दूभरि किया, सो काम एह मानव करै ॥

"भयकर सर्दी से जब हरे वन भी शीत दग्ध हो जाते है उस समय अरहट के वफ जसे पानी मे पाव दकर फावडे स क्यारिया मे पानी दता हुआ किसान शारीरिक कष्ट उठाता है । शीत के कारण उसका सारा शरीर कापने लगता है । भगवान ने पेट को बडी कठिनाई से भरने वाला बनाया है जिसके कारण मनुष्या को ऐसे काम करने पडते हैं—इससे भगवान की महिमा और उसकी इच्छा के प्रति मानव के आत्मसमपण की भावना व्यजित होती है ।"

रस निष्पत्ति के ऐसे अनेक उदाहरण दुरसा के काव्य में [illegible] । पर यह निस्सकोच स्वीकार करने योग्य है कि वीर रस ही [illegible] का प्रिय था, जसी कि उस समय के समस्त डिंगल कविया की स्थिति [illegible] । वीर रस के नानाविध वणना से दुरसा का काव्य ओत प्रोत है । [illegible], [illegible] चुनौतियों, कुल गौरव की भावना से अभिभूत [illegible] प्रतिज्ञाओ, देश धर्म और अबलाओ पर होते अत्याचारों के लिए [illegible], शत्रु को देख कर होने वाले उल्लासों, आदि के नानाविध [illegible] गीता-कवित्तों में सरलता से प्राप्त हैं ।

वस्तु वर्णन—

रसो के अतिरिक्त भी काव्य में [illegible] प्रकट होता है । विपयो की विविधता [illegible] इसी से कवि के सूक्ष्म अध्ययन और [illegible] म प्रतिबिम्बित करने की [illegible] है । [illegible]

विशेष के वर्णना के लिए लागू हो सकती है, जो कि कवि की रुचि और प्रतिभा के अनुसार न्यूनाधिक हो सकती है। ऐसी बहुश्रुतता संभवत कविकर्म का एक प्रधान अंग है। उदाहरण के लिए युद्ध के वर्णना मे भी कवचो हथियारों घोडो हाथियो आदि की पूरी जानकारी, युद्ध कला का परिचय, पारंपरिक वर्णनो का ज्ञान, युद्ध पूर्व और समरांत की रीति आचार आदि अनेक सूक्ष्म अंग-उपांग हैं जिन्हें निकट रहकर देखने वाला ही बखान सकता है। दुरसा चूंकि मात्र कवि ही नहीं बल्कि योद्धा भी थे और युद्धो मे लडे भी थे, अत उनके द्वारा किए गए वर्णनो मे इन सभी बातो की बारीकियां आनी स्वाभाविक है। वसे भी दूर दूर तक श्रीमानो, राजपुरुषो और सामंतो-नरेशो से मिलने जुलने के लिए की गई अनवरत यात्राओ मे उन्होने जनजीवन को पर्याप्त निकटता से देखा होगा। अपने जीवन के प्रारंभिक वर्षों मे अभावग्रस्त जीवन बिताते समय उन्होने बहुत से अभावो और कष्टो का स्वय अनुभव भी किया ही होगा। ऐसी ही साधनाओ ने उनको वह अंतर्दृष्टि दी जो उनके काव्य मे यत्र तत्र खोजी जा सकती है। पारंपरिक भारतीय साहित्य का उनका अध्ययन भी बडा विस्तृत रहा होगा जिसे उनके काव्य मे स्थान स्थान पर आए ढेरो दृष्टांत प्रमाणित करते हैं। वस्तुवर्णन की उपर्युक्त धारणाओ की पुष्टि मे उनके काव्य से कुछ उदाहरण देखे जा सकते हैं —

मानसिंघ रा झूलणा

नखत अमोघ जनमीया, दुहु पखि राजन्ना,
दादा पीथल, भारमल, पचायण नन्ना,
थूवा नवेग्रह राजयाग, मन्नि बार भवन्ना,
घनि महूरति जनमराति, धनि तास लगन्ना,
खग्गि हणू जिम लखिणह जिम भीम अजन्ना,
दत्ता वीक्रम ओज वळि कूरम करन्ना,
वडा गढा तोडणो, दैंना वड दन्ना,
वस छतीसा मधणा अढार वरन्ना,
हुव सुप्रसन्ना वालमीक सरस सुप्रसन्ना,
जदे, सुखदे, वव्रवा, बलि व्यास वरन्ना,
आदि सकति प्रसन्न हू, गणपति प्रसन्ना,
काहे खडा खिव्रीय मन्ना असमन्ना।

इस छन्द मे मानसिंह कछवाहा के वंश का परिचय, ज्योतिष शास्त्र के अनुसार राजयोग देने वाले ग्रहो और शुभ लग्न महूर्त आदि की जानकारी, हनुमान, लक्ष्मण, भीम अर्जुन कर्ण, विक्रमादित्य, बलि आदि पौराणिक ऐतिहासिक पात्रों का ज्ञान, तथा वाल्मीकि, जयदेव, सुखदेव, वेदव्यास आदि कवियो की मोटी जान

वारी परिलक्षित होती है। इसी कृति म आगे चलकर अकबर की ओर से मानसिंह द्वारा किए गए स म प्रयाणा, छत्तीस राजकुलो, मुसलमान धम से सबधित तथ्यो तथा अनेक प्रकार के पौराणिक प्रसगो के सकेत स्थान स्थान पर उपलब्ध हैं। इन सबसे कविकम की दुरुहता और विस्तत ज्ञान की अपेक्षा प्रकट होती है।

विषय वस्तु की विविधता की दृष्टि से दुरसाकृत 'किरतार बावनी' एक बेजोड रचना है। उसम पचास छदो मे विविध पेशा के लोगो के कष्टो का सहानु भूति पूण वणन किया गया है। प्रमुख पेशे—किसान नाविक यात्रारक्षक, कासिद, महावत, सिपाही, चोर पासीगर माछीगर, वेश्या, भिखारी गारुडी ठग, पहरेदार, तैराक, भाट लक्कड्हारा भील, कहार, खनिक, मरजीया, कसाई आदि बताए गए हैं।

काव्य-सौष्ठव

काव्य के छद अलकार रस आदि अ य अनेक वाह्याभ्यतर उपादानो से ऊपर कवि की अपनी अभि यक्ति ही प्रमुख होती है, जो उसके काव्य को एक निजी विशिष्टता प्रदान करती है। यही अभि यक्ति रूढिया और परम्पराओ के वाग्जाल मे से उसके निजत्व को उजागर करती है। अत उस अभिव्यक्ति की व्याख्या ही किसी कवि के काव्य सौष्ठव की सच्ची पहिचान होगी। इसी अभि व्यक्ति को 'शली' मानने वाले पाश्चात्य आलोचका ने 'स्टाइल इज दी मन' कहकर इसका महत्व प्रतिपादित किया है।

दुरसा के काव्य म इस आत्मीय अभिव्यक्ति का सवश्रेष्ठ रूप उसकी सबोधनात्मक शैली म निहित समझा जाना चाहिए। राजदरबारो और युद्धो मे समान रूप से अपनी ओजस्वी वाणी म वीर कृत्यो का अभिनदन करने वाले और क्षात्रधम की प्रतिष्ठा के लिए मर मिटने की प्रेरणा देने वाले उनके विरदायक स्वरूप का प्रकाश जहा जहा प्रतिबिम्बित हुआ, वे ही स्थल डिगल के चारणी काव्य की आत्मा बन गए है। एक सच्चे चारण कीर्ति का प्रसार करने वाले चारण, की इससे सुदर पहिचान सभव नही हो सकती। विद्वत्तापूण वणना, कष्ट कल्पनाआ और शब्दाडवरा मे जकडी रूढियाँ तथा परपरायें डिगल को चारण काव्य नही बना पाती। ऐसे ओजपूण उद्बोधन ही उसे वह सना प्रदान कर सकते हैं। चाहे कोई प्रशस्ति गीत हो चाहे उदबोधन हो या मरसिया हो दुरसा एक सच्चे चारण की तरह उच्चतर धरातल पर खडे होकर अपनी बुलद आवाज म दोना हाथा को उठाकर, हृदया को आन्दोलित करते, यशगान करत हुए प्रतीत हाते हैं। ऐसे समय उनका स्वर समूचे युग का समस्त सस्कृति का स्वर बन जाता है।

ओज, स्फूर्ति, प्रेरणा, प्रोत्साहन और उदबोधन से भरा ऐसा ही एक छद देखिए। 'रामदास चादावत के गीत म दुरसा उसे मृत्यु रूपी मेहमान की आव

भगत करने का आमन्त्रण देते है—

हुवै भगति हथवाह ओछाह सबळा हुव,
सुकज सुहडा तणौ मनि सुहायो।
तू जिकौ वाछतौ राम चादा तणा,
आज कौ मरण महमाण आयो ॥1॥

"खड्ग प्रहारा की मनुहारो से सबल भी 'ओछे' हो रहे है, योद्धाओं के इस सतकृत के समय आज मृत्यु रूपी मेहमान आ गया है, जिसकी तुझे अभिलाषा थी।"

महाराजा रार्यासह के शोकगीत (मरसिये) मे भी ऐसे ही एक युग प्रवाही स्वर मे दुरसा न वेलाग होकर रार्यासह की वदायता की प्रशसा मे ये पक्तिया कही हैं—

वळे कदी देखसा जदी वाखाणसा।
हुसी कोई हाथिया देण हारो॥

"फिर कभी दुनिया मे कोई हाथिया का इतना बडा दान करने वाला पदा हुआ देखेंगे ता हम उसका बखान तब करेंगे।"

सभवत अभिव्यक्ति के इस कौशल से ही दुरसा ने जन मन को प्रभावित किया, और जहा कही गए मान सम्मान धन व ऐश्वय प्राप्त किया। अकबर को सबोधित करत हुए कहा गया उनका गीत महावतखा और वरामखा को कहे गए उनके दोहे, मार्नासह की प्रशसा मे कहे गए उनके झूलणे(नीसाणी) तथा राव सुरताण, अमरसिंह आदि का यशवणन करते हुए उनके कवित्त आदि सभी म उद्बोधन का यह स्वर प्रमुख रूप से उभरकर आया है।

एक और पक्ष कवि की मनोवैज्ञानिक सूझ बूझ का भी है। वह कहीं भी विवादो म नही उलझा है। मार्नासह और प्रताप के तथाकथित वमनस्य की झलक भी कही उनके काव्य मे नही मिलती। अकबर की प्रशस्ति करते हुए उसने प्रताप का उल्लेख नही किया है। इसी प्रकार प्रताप के यश-वणन म अकबर की निन्दा नही होनी चाहिए थी। यह निन्दा 'विरुद छिहत्तरी' के अतिरिक्त किसी अन्य काव्य मे नही है। चूकि इस रचना की प्रामाणिकता विवादग्रस्त है अत दुरसा की विचारधारा के अनुसार यह एक चिन्त्य विषय है। अन्य किसी भी गीत या छन्द मे, परम्परागत शत्रुता मे उलझे राजपूत कुलो की निन्दा को उन्होंने चतुराई स बचाया है। यह भी दुरसा की लोकप्रियता का एक कारण है। वैसे भी सारग्राही कवि को गुणा, आदर्शों और सत्कृत्यो का यशोगान ही अभीष्ट होना चाहिए।

दुरसा के काव्य सौन्दय मे उनके शब्द चित्रो की विशालता, व्यापकता और उदात्तता अत्यधिक प्रभावोत्पादक है। उनके युद्ध वणनों म पहाड रक्त मे रग

जात ह, आकाश कुकुमार्चित हो उठता है, धरती पर रक्त प्रवाह वहने लगता ह, और उन सबके बीच विजयश्री को वरण करने वाले क्षत विक्षत वीर की दीघ काय बलिष्ठ मूर्ति रक्तरजित खड्ग लिए गव से माथा उठाये खडी दीखती है। ऐसे ओजस्वी और प्राणवत चित्र ही दुरमा के काव्य को जीवत, छबिवत बनाते है।

दुरसा की कल्पनायें बडी भव्य ह उनका शब्दसयोजन मार्मिक है, उनका वण विन्यास रसोद्रेक करने वाला है, उनकी शैली प्रेरणास्पद है, उनका वणन उद्दाम है, उनके उपमान दिव्य है, और उनके मूर्तिमत शब्द चित्र गगनचुम्बी होकर दशो दिशाआ मे व्याप्त है।

अध्याय 6

समाज और सस्कृति

दुरसा के काव्य का समाज स्पष्टत दो भि न भागा म विभक्त है। एक तरफ तो समद्ध पर सघपशील साम ती समाज है, जिसके पास भूमि है, अनुचर हैं, सनिक हैं और इन सबके फलस्वरूप अपेक्षाक्त सप नता भी है। दूसरी ओर राज्याश्रित वग के अतिरिक्त जनसामा य है जा कठिन श्रम करने पर भी बडी कठिनाई से अपना पेट पाल सक्ता है। जो सामन्ती वग है, उस निरतर युद्धरत अथवा दान-तत्पर ही चित्रित किया गया है। युद्ध को विशुद्ध पारिभापिक अथ मे 'युद्ध' के *रूप मे ही चित्रित किया गया है, उसमे आदर्शों एव मूल्या का टकराव अथवा* द्व द्व की स्थिति स्पटप्त उभर कर नही आई है। वीरता प्रदशन एक करतब ही बनकर रह गया है। उसके पीछे की सास्कृतिक पृष्ठभूमि बहुत थोडे प्रसगो म ही उभर कर प्रत्यक्ष हुई है। ऐसे स्थलो पर अनेक कल्पनाओ और उक्तिया के बाव जूद युद्ध औपचारिकताओं, रूढियो और परम्पराआ म उलझकर रह गया है, वीरता पट्टेबाजी का प्रदशन ही बन गई है। जीवित समाज से, उसके प्रति किए गए अ यायो की उपकृति के रूप मे, उसका कोई सबध नही रह गया है। जहा कही वीरता और युद्ध को कारणसम्मत बनाया गया है, वहा वह क्षात्रधम के पालन का व्रत लिए हुए हैं। डिंगल कवियो ने इस धम का अ यत्न अनेकरूपो मे मुखरित किया है। इनमे से एक इस प्रकार है—

> धर जाता ध्रम पळटता, त्रिया पडता ताव।
>
> ए तीनू दिन मरण रा, कूण रक कुण राव॥

"जब धरती छिनी जाती हो, धम का अनादर हो रहा हो और स्त्री समाज विपदाग्रस्त हो—ये तीनो दिन मर मिटने के है, भले ही कोई गरीब हो या राजा हो।"

इस आदश का निर्वाह करने की प्रेरणा डिंगल के चारण कविया न नाना प्रकार की का योक्तिया म दी हैं। दुरसा के गीता मे क्षत्रिया के इसी धम के उल्लेख हैं।

क्षात्रधम का यह वचस्व के द्रीय विदेशी मुस्लिम सत्ता के विरोध के रूप म

मुख्य रूप से प्रकट हुआ है। इसके पीछे दो भाव है, एक तो स्वय की स्वाधीनता की रक्षा का तथा दूसरा स्वधम का पराभव से उबारने का। इन दोनो भावो को दुरसा ने अपने काव्य मे स्थान-स्थान पर उभारा है। अपनी स्वाधीनता की रक्षा करते हुए कष्ट सहन करने वाले और अपनी लडकिया की शादी बादशाहो से करके उनकी कृपा अर्जित करने म विश्वास नही करने वाले महाराणा के लिए कहे गये उनके गीत इस सबध मे दष्टव्य हैं —

महाराणा प्रताप रो कवित्त (छप्पय)

अस लेगो अणदाग पाघ लेगो अणनामी।
गो आडा गवडाय, जिको वहता धुर वामी।
नवरोजे नह गयो, न गो आतसा नवल्ली।
न गो झरोखा हेठ, जेठ दुनियाण दहल्ली।
गहलोत राण जीती गयो, दसण मूद रसणा डसी।
नीसास मूक भरिया नयण, तो म्रित साह प्रतापसी ॥

"तुमने अपने घोडे को बादशाही सेना का दाग नही लगने दिया। तुम्हारी पगडी कभी किसी के आगे झुकी नही। तुम, जो हमेशा वामपथी—विरोध के विकट माग पर चलने के कारण घोर सघप करने वाले—बने रहे, अपनी प्रशसा के गीत गवाते हुए इस ससार से विदा हुए। तुम कभी नवरोज के जश्न म नही शरीक हुए और न आतिशबाजियो म। तुम कभी बादशाही दशनो के झरोखो के नीचे भी नही गए जहा जाते हुए दुनिया दहल उठती थी। ऐसी आन-बान वाला गुहिल वश का राणा अविजित ही चला गया, यह सोचकर बादशाह ने क्रोध से दात भीचकर अपनी जीभ काट ली। हे प्रताप, तुम्हारी मत्यु पर इस दुःख से नि श्वास छोडते हुए बादशाह की आखो म आसू भर आये।"

मरणोपरात कहे गए इस शोक-काव्य म राणा की स्वाधीनता की जय जय कार करते हुए कवि ने स्वतत्रता के उच्चतम आदश की स्थापना की है। धम सकट सबधी एक छद की कुछ पक्तिया भी बडी सराहनीय बन पडी ह —

राउल राण राउ अनि राजा।
अकबरि नरि विनडिया अनेक ॥
दुजडो खरो अभनमा दूदा।
हींदूकारि तुहाळो हेक ॥

'अकबर से आतकित जब अन्य राजा-राणा-रावल राव असमथ हो गए तो अकेले तूने (सुरताण ने) तलवार उठा कर हिन्दुत्व की जयजयकार की।"

क्षत्रिय समाज के ऐसे वीरोचित कार्यो से दुरसा ने अनेक सास्कृतिक मूल्यो को उदभासित किया है जैसे—दानवीरता, वचन पालन, शरणागत रक्षा, स्वामि भक्ति, अतिथि सत्कार, प्रतिशोध, यशोकामना तथा सत्ता विरोध।

वचनपालन क्षत्रियों का प्रमुख गुण गिना गया है। इसके उदाहरण डिंगल साहित्य में भी प्रचुर हैं। दुरसा ने मानसिंह सक्तावत के गीत में इस का बखान किया है। मानसिंह ने अपने मित्र भीम सीसोदिया को उसके आह्वान पर आकर युद्ध करने का वचन दिया था। हाजीपुर नामक स्थान पर जाकर उसने वचन पालन किया—'मवाड धका पूरवगढ माल्है अईया सकतहरा उनमान। जग परदेस जीववा जावै, मरवा गयो करारा मान॥' स्वामिभक्त मेडतिया मुकुन्ददास अपने स्वामी 'राणा" के लिए बलिदान होकर वैकुण्ठ में परमेश्वर के समान ही पूजित हुआ—

मोटा सामि सुछळि मेडतियै, महि मोटो कीधो मरण।
परमेसर भेळा पूजीजै, वकुंठ वीर वळोधरणा॥

अदम्य उत्साह, हिम्मत और उत्कट वीरता के सदगुणों का बखान करते हुए चौहान 'जसवंत भाणोत' का वर्णन बड़ा समर्थ बन पड़ा है—

सोर सर पाथरा तणो वरसै सघण।
पेलज्यै सेल खग चढे पीठाणि॥
हाथ ऊभा किया मूगल हिंदुअे।
भाण रो त्यार बाखाणियो भाण॥

'जब गोलों पत्थरों-बाणों की सघन वर्षा हो रही थी, ऐसे समय घोड़े की पीठ पर चढ़कर भालों के प्रहारों से शत्रुओं को वेधते समय, मुगलों और हिंदुओं ने समर्पण भाव से हाथ ऊँचे कर दिए, तो भाण के पुत्र की प्रशंसा स्वयं सूर्य ने की।"

प्रतिशोध की अग्नि से तत्कालीन क्षत्रिय समाज धधक रहा था। यह मानव सभ्यता की आदिम वृत्ति के रूप में हरेक वीर के हृदय में प्रज्वलित रहती थी। डिंगल काव्य भी इससे अछूता नहीं है। दुरसा ने 'माडण" के गीत में उस प्रतिशोध का यशोगान किया है—

वडो वैर विढि वाळीयो मयक सीहो वहै,
विसहरे, नरे मानी सुरे वात।

प्रतिशोध की ही भाँति ऋण से उऋण होना भी एक बड़ी बात मानी जाती थी। दुरसा ने इस उऋण होने की भावना की ओर लक्ष्य करते हुए मेवाड़ के राणा की प्रशंसा में एक छंद में यह संकेत किया है—

"क्षत्रिया कुळ लहणो छोडवियो, राण दियत रायपुर"

'राणा ने "रायपुर" का दान देते हुए क्षत्रियों पर चले आ रहे चारणों के ऋण से जैसे क्षत्रिय कुल को मुक्त करवा लिया।'

वीर "चादा" को सत्ता के विरोध में रहकर बादशाही राज्य से भी जकात वसूल करते हुए दिखाकर दुरसा ने सत्ता विरोध की बात कही है—

आलम धर तणी जगाति उग्राहै
अरबद धरा भर डड आण।

राहु सदा लग ग्रहै चद रवि,
चद राहु ग्रहीया चहुआण ॥

दानवीरता की प्रशसा म कहा गया एक गीत बीकानेर के महाराजा रायसिंह स सबध रखता है जिन्होंने 'शकर' नामक बाग्हठ को सवा करोड रुपए का दान दिया था—

सवलाखा ऊपर नवसहसा,
लाख पचीसू दीध हिलोळ।
खित पुड घणा गडोयळ खावै,
बूडै छात विया जस बोळ ॥

"हे राठोड (नवसहस्र के विरुद को धारण करने वाले), तुमने सौ लाख के भी ऊपर पच्चीस लाख और प्रसन्न होकर दिए। इस पृथ्वी पर तुम्हारे इस यश के प्रवाह मे दूसरे अनेक राजा उथल-पुथल हो रहे हैं।]

दानवीरता के साथ ही गुणग्राह्यता का एक और स्वरूप भी परपरागत भारतीय सस्कृति के प्रतीक रूप म तत्कालीन उच्च वग मे विद्यमान था। इसका एक दृष्टात कवियो को पालकी मे बठाकर राजा या दानदाता द्वारा स्वय कधा देने के रूप मे प्राप्य होता है। यह एक उच्च कोटि का आदश सम्मान समझा जाता था। बीकानर के महाराजा रायसिंह ने कोड पसाव का दान देते समय कवि की पालकी मे जो कधा दिया उसके सूचक गीत का सबधित अश दुरसा ने इस प्रकार कहा है—

काध जिका नै दीध कनावत, अही मौज लहर अनमध।
जस उर धक आवता जाता, बूड अनरा मुकुटबध ॥

"हे कल्याणसिंह के पुत्र, तुमने जो (कवि की पालकी में) कधा दिया, वह मानो दान के प्रबल प्रवाह की एक लहर बनगई, जिसके सामने आते अनेक मुकुट धारी आने जाने डूबने लग गए।"

"वीरभोग्या वसुधरा" के सनातन सत्य को दोहराते हुए दुरसा ने तोगा सुरताणोत" के गीत म इस पर बार-बार बल दिया है—

अग हू मछर मेलै नही आपणौ।
तिके नर भोगवे वीय धरती तणौ।
राहडी कथा कूरम छिद ऊपनो।
मारका हाथि आवै सदा मदनी ॥

लेकिन वीरा का वीरत्व भी धमविहीन नही था। वीरा की धर्मपरायणता सदा प्रशसापूवक वणनीय रही है। युद्धभूमि मे जाने से पूव समस्त धार्मिक आच रण करन के प्रमाण दुरसा क साहित्य म प्राप्त है—

सुमरण, दानसिनान कर, वन्दे गोविन्दा।
तिलक दवादस ताणिया, सिर मजरद्रदा ॥
दळ भीना गगाजळे, चन्दण चरचदा।
जाणे पडव हालिया, गिर हेम गळदा ॥
लिया छतीसा आवधा, मारू मलफन्दा।
एकूके क्रम काट काट, असमद करदा ॥

"भगवान का स्मरण, स्नान, दान और वन्दना करके, द्वादस तिलक लगाकर, सिर पर तुलसी की मजरी लगाकर, गगाजल म भीगे चदन से स्वय को चर्चित कर, छत्तीस आयुधा को धारण किए हुए राठौड वीर एसे चले माना पाडव हिमालय मे अपने को गलान जा रहे हा। फिर एक-एक करके क्रम से (शत्रुओ को) काटते हुए उन्हान युद्ध किया।"

उपर्युक्त सास्कृतिक मूल्या की बातें दुरसा ने क्षत्रियो क प्रसग मे ही कही हैं। उनके काव्य का एक दूसरा और सशक्त पहलू है उन सामान्य श्रमिको की पीडा का जिसे उन्हान 'किरतार बावनी' नामक स्फुट काव्य मे प्रकट किया है। इन छदो को पढन से तत्कालीन बहुसख्यक समाज की दयनीय स्थिति का बोध सहज ही हो सकता है। दुरसा ने कोई पचास प्रकार के श्रमजीविया और पेट भराई के लिए अन्य कुकम करने वाले लोगो की वेदना बडी सहानुभूति पूवक दरसाई है। यदि यह कृति नही होती तो दुरसा मात्र सपन्न वग के विरदगायक बनकर रह जाते। इस कृति के प्रत्येक छद मे एक व्यवसाय विशेष की समस्त दिनचर्या को चित्रवत् खचित करके दरसाया गया है। वणन का यह कौशल सक्षेप म एक बहुत बडे आयाम को समेटकर रखने मे सफल हुआ है। ऐसे श्रमिको भिक्षुका, ठगो और हीन कम करने वाला के कुछ उद्धरण देने से यह पक्ष भली प्रकार सिद्ध हो सकेगा—

केवट

रचना प्रवहण रचे, बहुत नर माहे बस,
अथग नीर आगम, पूरि जोखम म पेस,
किण हिक वाय कुवाय, कारि काजळ री कप
न्यूय न को आधार जीव दुख किण सू जप
जलमाधि नाव बूडे जरे कोदक विरळो ऊगर।
करतारपेटदूभरि कीया, सा काम एह मानव कर॥

"नौका बनाकर बहुत से लागा को उसमे बैठाता है, अथाह पानी में पूरी जाखिम उठाकर उन्हे ले जाता है, काई हवा चलने से मूसलाधार वर्षा हो जाती है वहा निराधार नाव डूब जाती है तो कोई विरला ही बच पाता है। पट

के लिए मानव को यह सब करना पडता है।"

ठग

पासीगर न पेट, हृदय बहुकपट रहाव,
धोती खखबर धरैं, वळे तिहा तिलक बणावैं,
हथमाळा ले हाथि कहै हर गगा कासी,
मारण टाणो मेलि, पलक माहि नाखै पासी,
मानवी रतन न मारता, आ तिल ही नवि अूगरैं।
करतार पेट दूभरि किया, सो काम एह मानव करैं ॥

"ठग के पेट और हृदय मे बडा कपट रहता है। वह तिलक, माला और भस्म लगाकर धोनी पहिन 'हर गगा कासी' का उच्चारण करता हुआ माग मे ठगी रोपता है। पलक झपते ही वह गले मे फदा डालकर मनुष्य रूपी रत्न को मारते हुए जरा भी नही हिचकता।"

भिखारी

एक टूक कारणे, भमे घर घर भिख्यारी
दीन वचन दाखवे, भणे मुहि लब्बर भारी,
अणदेखे अणदत्त, अडे दे उत्तर आडा,
तो ही रग रग तेथि, मागि अन मेले माडा,
पिंड रो मान मूके धर सूधी भिक्षा धर।

"एक टुकडे के लिए भिखारी घर घर फिरता है दीन वचन बोलकर गिड गिडाता है, जब तक कोई न दखे और न दे तव तक अडा रहता है, अपमानित हाकर भी वह माग मागकर अन्न सग्रह करता है। इस प्रकार सारा स्वाभिमान छोडकर वह भिक्षावृत्ति करता है।'

इसी प्रकार दुरसा ने अफडी साधुओ, भवाई-रावल आदि तमाशा करन वालो और भाडा, धरोहर का हडप जाने वाले दुजनो, पशुवध करने वाले कसाइयो, बैलो को बधिया करने वाल पशेवरो, स्त्रियो को बेचने और वेश्यावृत्ति कराने वाले हरामखोरो तथा चोरो, कासिदा, खनिका किसाना, कहारो, वाजीगरो, महावता, भीलो आदि की कष्टदायक और हीन जीवनचर्या का बखान किया है। दुरसा की सहानुभूति धन कमाने के लिए परदेशो म प्रवास करने वाले व्यवसायिया अन्न के लिए सैनिकवत्ति करने वाले राजपूतो, ग्रहणादि पर स्वणदान लेने वाले ब्राह्मणा तथा ऐसे ही अन्य विवश लोगो पर भी गई है।

इस वणन से उस समय के समाज का यह पक्ष जिस प्रकार स्पष्ट किया गया है वह आम आदमी के दु खा की कारुणिक गाथा है। सामाजिक विषमताओ के

इन नग्न चित्रो म जहा विवशताय, अभाव आर जीवित रहने की समस्यायें ही दत्याकार बनी हुई हैं, वहा ऊचे चारित्रिक गुणा और सास्कृतिक बुलन्दियों की बात करना ही अपराध होगी। मध्य युग के जो चित्र इतिहासा और काव्यों म अभी तक मिले है उनकी तुलना म दुरसा द्वारा चित्रित कोई चारसौ वष पहिल का यह यथाथ समाज इतिहासकारा क लिए एक चुनौती है। भारत का, विशेषकर राजस्थान का, सामाजिक और सास्कृतिक इतिहास लिखन वाले विद्वानों के लिए दुरसा का यह काव्य एक बहुमूल्य धराहर समझा जाना चाहिए।

सस्कृति के बाह्य पक्ष की भी विपुल सामग्री दुरसा के काव्य के सूक्ष्म अध्ययन से प्राप्त हो सकती है। तत्कालीन लोकप्रचलित वेष भूषा, अस्त्र शस्त्र, साज-सज्जा, रूप शृगार, आवासगृहा, कलाआ, विवाहा, रीति रिवाजों, परपराआ, मान्यताआ तथा लाक जावन के अन्य नानाविध विस्तार की सयाजक सामग्री दुरसा के काव्यो और गीता म बिखरी मिलेगी। इस विषय मे दुरसा के रचे रूपक गीत अधिक सहायक है। कुमार अज्जा की गजगत म विवाह का एक सागोपाग रूपक है जिसमे वर-वधू के समस्त शृगार और वैवाहिक रीतिया का विस्तार स उल्लेख है। आखेट, वषा, अतिथि सत्कार आदि कई रूपका के गीत बहुत सुदर बन पडे है जिनमे तत्कालीन जीवन की झाकिया मिलती है।

काव्य की दष्टि से डिंगल काव्य को अतिशयोक्ति का काव्य समझने वाले आलोचको को उसे उसके सामाजिक और सास्कृतिक मूल्या के लिए भी जाचना चाहिए। इस परिप्रेक्ष्य मे दुरसा का काव्य नि सदेह बडा मूल्यवान प्रमाणित हो सकेगा।

अध्याय 7

ऐतिहासिक साक्ष्य

अब यह कोई अल्पज्ञात तथ्य नही रह गया है कि डिंगल काव्य, जो अधिकाशत दूहो और गीतो मे समाहित है, ऐतिहासिक दृष्टि से भी बहुत महत्वपूर्ण है। डिंगल कवियो ने व्यक्तियो और घटनाओ को ही अपने काव्य की मुख्य विषय-वस्तु बनाया था। अत इतिहास की दृष्टि से उनका पृथक स्थान बन जाना समझ मे आता है। तत्कालीन काव्य धारा मे प्रचलित अभिव्यक्ति की रूढियो और परपराओ को समझने वाला कोई भी सुधी आलोचक अलकारो और रूपको से लदी शब्दावली म से इतिहास का तथ्य सरलता से खोज सकता है। इतिहास के साथ इस अविच्छिन्न सबध के कारण ही स्वय डिंगल गीतकारो ने अपने गीतो को 'साख री कविता'—साक्षी की कविता—कहना ठीक समझा है। इन्हे लिखते समय घटना-सबधी उल्लेख निम्न प्रकार किया जाता है, यथा —राव बीकैजी वरसघ न छोडायौ तिण साख रा गीत (राव बीका ने वरसघ को छुडाया उस साक्षी का गीत), राव जैतसीजी काम आया तिण साख रो गीत (राव जतसी काम आये उस साक्षी का गीत), आदि।

इसलिए साधारणत समस्त डिंगल काव्य से और विशेषत डिंगल गीतो से इतिहास की सामग्री का सकलन और अध्ययन किया जाना आवश्यक है। दुरसा ने भी शताधिक गीत लिखे है। 'माताजीरो छद' और 'किरतार बावनी' नामक रचनाओ के अतिरिक्त उनकी प्राय समस्त रचनायें किसी न किसी प्रकार से इतिहास से सबधित है। दुरसा समसामयिक राजनीति के महत्वपूर्ण व्यक्तियो के निकट सपर्क मे रहे इसलिए उनकी जानकारी बस भी प्रामाणिक मानी जा सकती है।

गीतो की रचनाओ के लिए उपयुक्त अवसरो का महत्व था। जब कभी किसी वीर ने युद्ध किया, मृत्यु का वरण किया, अन्याय का विरोध किया, सत्ता के प्रति विरोध-प्रदर्शन किया अथवा कीर्ति के लिए कोई दान दिया, या दुर्ग, आवास, उद्यान आदि का निर्माण किया, तभी कवि की लेखनी को प्रेरणा मिली और उसने उस घटना के केन्द्र बिन्दु को अपनी अभिव्यक्ति मे समेट लिया। सम

सामयिक साक्ष्य का इससे अधिक और क्या स्रोत हो सकता है ! जिस व्यक्ति का जो कार्य लोकप्रसिद्धि का पात्र होता था वही गीतों का विषय बन सकता था। निन्दा व प्रसग भी यत्र-तत्र मिलते हैं, पर प्रशस्तिमूलक काव्य ही अधिक है।

राजस्थान का इतिहास तो अभी विस्तार से लिखे जाने की प्रतीक्षा मे है। इसलिए ये छोटे छोटे साक्ष्य भी बटोरे जाने चाहिए। भारतीय इतिहास की अनेक स्थापित धारणाओ मे भी ऐसे कुछ प्रसगो से सशोधन करने की आवश्यकता पड़ेगी। अभी तक मध्यकालीन इतिहासकारो ने फारसी, अरबी इतिहासो तथा विदेशियो के यात्रा विवरणो का ही अधिक सहारा लिया है। उन्होने डिंगल काव्यो को इतिहास से पृथक् मानते हुए या तो उनका अध्ययन ही नही किया और किया भी तो अतिशयोक्तिपूर्ण मानकर कोई महत्व नही दिया। यह सब काव्य परपराओ से उनकी अनभिज्ञता के कारण हुआ।

राजस्थान का स्थानीय राजनैतिक इतिहास एक तरह से यहा के राजपूत राजवशो द्वारा किए गए युद्धो से ही सबधित है। चारण जाति राजपूतो के अत्यधिक निकट रही है। सामाजिक दृष्टि से समीप रहने के कारण राजनीति मे भी चारणो का प्रवेश परामर्श, सहायक, पथप्रदर्शक प्रशसक आदि रूपो मे रहा है। इसलिए चारणो के पास उनके ऐसे कार्यों के विषय मे विश्वस्त जानकारी रहती आई है। इन्ही जानकारियो ने उनकी रचनाओ को भी विश्वस्त बना दिया है।

दुरसा ने जिन जिन व्यक्तियो और घटनाओ से सबधित ऐतिहासिक गीत लिखे हैं उनमे से कुछ का विवरण यहा दिया जा रहा है। कुछ गीतो मे वर्णित घटनाओ की इतर ऐतिहासिक स्रोतो से पुष्टि करके भी यह दिखाने का प्रयास किया गया है कि दुरसा द्वारा दी गई जानकारी असत्य नही हैं —

(1) गीत गोपालदास सुरताणोत रो—'बाकीदास की ख्यात' (पृ० 62) के अनुसार यह दक्षिण के युद्ध मे काम आया था। यह गीत उस युद्ध का साक्षी है।

(2) गीत मान सकतावत रो—'वीरविनोद' के अनुसार मानसिंह, भीम सीसोदिया को दिए गए वचन के अनुसार, पूर्व मे हाजीपुरपट्टन नामक स्थान पर जाकर लड मरा था। यह गीत उसी घटना क्रम का साक्षी है।

(3) महाराजा रायसिंह काडपसाव दियो तिण साख रो गीत—गौरीशकर हीराचद ओझा ने अपने 'बीकानेर राज्य का इतिहास' मे 'दयालदास की ख्यात, के आधार पर इस घटना का उल्लेख किया है।

(4) गीत मेडतिया मुकुन्ददासजी रो—सुप्रसिद्ध जयमल मेडतिया का पुत्र मुकुन्ददास महाराणा अमरसिंह की सहायता करता हुआ राणपुर के

युद्ध मे काम आया था। इस गीत मे वर्णित इस घटना की पुष्टि 'बाकीदास की ख्यात' म पृ० 95 पर की गई है।

(5) गीत राजा श्री रार्यासघजी बीकानेरीया रो—यह गीत रार्यासह के जसलमेर मे हुए विवाह के अवसर पर कहा गया है जो बीकानेर के सभी इतिहासा के अनुसार एक सत्य है।

(6) गीत जैमल मुहणोत रो—मारवाड के दीवान तथा अनेक युद्धो के सेना नायक जैमल मुहणोत नैणसी मुहणोत के पिता के रूप मे प्रसिद्ध है। जोधपुर महाराजा गर्जासह के समय य दीवान थे। गौ० ही० ओझा ने यह 'टिप्पणी मुहणोत नणसी की ख्यात' (नागरी प्रचारिणी सभा, भाग पृ० 102) म दी है।

इसी प्रकार ज्ञात ऐतिहासिक व्यक्तिया और घटनाओ से सभी गीतो का तारतम्य बैठाया जा सकता है। इस दृष्टि से दुरमाकृत कुछ प्रमुख गीत इस प्रकार ह—

1	गीत देवडा सवरा रो	2	गीत जगमाल रा
3	गीत किसर्नासध रो	4	गीत हाम देवडा रो
5	गीत सुरताण जैमलोत रो	6	गीत नरबद उरजणोत रा
7	गीत चहुवाण जसवत भाणोत रो	8	गीत रामदास चादाउत रो
9	गीत माडणजी रो	10	गीत सोलकी वीरमदेजी रो
11	गीत सोलकी माला साम दासोत रो	12	गीत तोगा सुरताणोत रो
13	गीत अचलदास वलभदोत रो	14	गीत चादाजी रो
15	गीत राणा अमर्रासह रो	16	गीत सुरत्ताण रो दताणी र जुद्ध रो
17	गीत देवडा प्रिथीराज रो	18	गीत राजा सूर्रासघ रो
19	गीत भाटी गोविन्ददास मानावत रो	20	गीत भाण सोनगरा रो
21	गीत कचरा कूपावत रा	22	गीत कमसेन रो
23	कुवर रतन महेसदासोत रो गीत	24	गीत भगवानदास अूदावत रो
25	पूरणमल भाणावत रो गीत	26	बीजा हरराजोत रो गीत
27	गीत चीबा दूदाजी रो	28	गीत राजिश्री रोहितासजी रो
29	महाराजा रायसिह चीतौड परणिया तिण साख रो गीत	30	गीत प्रिथीराजजी री वेल रो

इस प्रसग मे यह वात ध्यान देने योग्य है कि मध्यकालीन
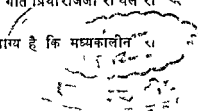
साहित्य यहा के स्थानीय इतिहास से इतना घुला मिला है कि दोनों को पृथक करके देखना बड़ा दुष्कर है। वास्तव में तो इस साहित्य को भली प्रकार समझने के लिए राजस्थान के इतिहास की विस्तृत जानकारी और यहा की सांस्कृतिक परम्पराओं का परिचय, दोनों ही बहुत आवश्यक हैं। दुरसा जैसे प्रतिभाशाली और अपने समय के अति प्रसिद्ध कवि के गीतों और दूसरी कृतियों से यह तथ्य और भी पुष्ट होता है।

●

अध्याय 8

एक मूल्यांकन

दुरसा को कुछ आलोचकों ने एक राष्ट्रकवि के रूप में उभारने का प्रयास किया है। उनका आधार 'विरुद छिहत्तरी' नामक रचना है, जिसमें अकबर को एक हिंदू विरोधी के रूप में चित्रित किया गया है और महाराणा प्रताप को देश धर्म के प्रबल रक्षक के रूप में। कुछ शोध विद्वानों ने 'विरुद छिहत्तरी' की प्रामाणिकता पर प्रश्नचिह्न लगाया है। उनकी मान्यता है कि दुरसा जैसा प्रौढ़ कवि जिसने अकबर की प्रशंसा में भी काव्य सृजन किया है और जिसके विषय में अकबर के सान्निध्य की दंतकथायें भी प्रचलित हैं, बादशाह के लिए इतने ओछे शब्द—अकबरिया, तुरकड़ा, आदि—का प्रयोग नहीं कर सकता। दूसरे, कई ऐतिहासिक तथ्य भी, जैसे देबारी द्वार का उल्लेख, भी इतिहास विरुद्ध हैं, क्योंकि उस समय उनका अस्तित्व नहीं था। तीसरे, 'विरुद छिहत्तरी' में प्रयुक्त भाषा तथा आधुनिक भावनाओं की छाया भी दुरसा की भाषा और तत्कालीन कवियों के विचारों से मेल नहीं खाती। इन तर्कों के सामर्थ्य को मानते हुए दुरसा की कृति के रूप में 'विरुद छिहत्तरी' पर कम से कम चर्चा करने की चेष्टा की गई है। हां, उद्धरणों में उसके चुने हुए सोरठे अवश्य दिए हैं ताकि इस साहित्यिक विवाद से परे रहते हुए भी काव्य का रस लिया जा सके।

राष्ट्रकवि के रूप में स्थापना करने वाले आलोचक यहां तक तो ठीक ही हैं कि दुरसा ने पराधीनता स्वीकार न करने वाले वीरों—राणा प्रताप, राव चंद्रसेन, राव सुरताण, आदि की मुक्तकण्ठ से सराहना की है। इस प्रसंग में उन्हें बादशाही ताकत के सामने न झुकने वाले और हिन्दुत्व के पोषकों के रूप में चित्रित किया गया है। पर इनसे कम प्रशंसा उन अन्य अनेक वीरों की भी नहीं की गई है, जिन्होंने मुगलों के पक्ष में लड़ते हुए, स्वामिभक्त सेवकों के रूप में कट मरते हुए, अथवा पारस्परिक वैर का प्रतिशोध लेते हुए वीरता का प्रदर्शन किया। इस दृष्टि से ऐसी कोई विशिष्टता नहीं रह जाती है जिससे दुरसा ने कुछ चरित्र नायकों को दूसरों की तुलना में अधिक गौरवान्वित किया हो। आज जब धार्मिक परिप्रेक्ष्य में

अथवा स्वतन्त्रता के पुजारियो की भूमिका के रूप मे उन घटनाओ पर दृष्टिपात करते है तो वे पात्र अवश्य दूसरो से पथक और गौरवशाली दिखाई देते हैं। पर जहां तक चारण काव्य का प्रश्न है उसम उन्ही गुणो की वन्दना की गई है जो किसी वीर विशेष मे दिखाई दिए। दानवीर की वदान्यता, युद्धवीर का शौय, स्वतन्त्रता के रक्षक का स्वातन्त्र्य प्रेम धम रक्षक की धम परायणता, स्वामिभक्त का त्याग—जहा जसा देखा गया उसकी सराहना की गई। इसलिए जहा प्रताप को धमरक्षक और स्वतन्त्रता प्रेमी के रूप म वन्दित किया गया है, वही अकबर के अवतार रूप को, कछावा मानसिंह के अदभुत सेनापतित्व का, बैरामखा और महावतखा की वदान्यता को यशगीतो म समेट कर दिखाया गया है। ऐसी स्थिति म यह कहना सभवत सगत नही होगा कि दुरसा आधुनिक अर्थों म 'राष्ट्रकवि' थे। तत्कालीन काव्य परपराओ और चारण कवियो की विशेष स्थिति का पूरी तरह अध्ययन किए बिना इस प्रकार के निणयात्मक दृष्टिकोण का अपनाना सही नही है। यदि दुरसा को आज के सदर्भों मे राष्ट्रकवि मानें तो उनके चरित्रनायक राणा प्रताप को सकटो मे डालने वाले बादशाह अकबर तथा कछावा मानसिंह की प्रशस्तियो के लिए क्या दलील दी जा सकती है? इसलिए अच्छा यही होगा कि दुरसा को तत्कालीन परिस्थितियो म रख कर उनका सही मूल्याकन किया जाए।

दूसरा बडा श्रेय जो दुरसा को दिया जाता है वह उनके द्वारा अर्जित यश और द्रव्य, तथा चारण समाज के लिए और लोकहित के अन्य कार्यों म किए गए व्यय का है। दुरसा के एक लोकव्यवहारी सफल कवि होने के नाते यह बात समझ म आती है। भौतिक सफलता को श्रेष्ठ काव्य की कसौटी के रूप म तो स्वीकार करने का प्रश्न नही उठता, पर कवि की लोकप्रियता की बात इससे अवश्य सिद्ध होती है। इस मान्यता मे कोई दो मत नही होने चाहिए कि दुरसा न केवल चारण समाज म बल्कि उच्च वग के शासक एव सामत वग म भी बडे प्रिय थ और उन्होने प्रचुर द्रव्य एव यश अर्जित किया था। उन्हे अनेक 'लाखपसावो' तथा 'कोड पसावो' के अतिरिक्त गावो की जागीरें तथा अन्य दानादि भी प्राप्त हुए थे। अपने सुदीघ और सयमित जीवन के कारण व यह सब कुछ प्राप्त करने म सफल हुए।

लेकिन एक कवि के रूप म उनका मूल्याकन करत समय इस प्रश्न को दूसरे पहलुओ से देखना होगा। यह सही है कि दुरसा ने पारपरिक रीति से क्षात्र धर्मोचित गुणो का बखान कर तत्कालीन क्षत्रिय समाज को अपने कतव्यो के प्रति जागरूक बनाए रखा, पर ऐसा करने म अपने पूवगामी कवियो से उनकी कोई विशेषता नही रही। यदि महाराणाओ के प्रसग म ही लिया जाये तो महाराणा कुभा, सागा आदि के लिए ऐसे ही उद्गार पहिले भी कवियो ने प्रकट किए थ। राव

अमरसिंह के विद्रोह को शत शत छदा म अनेक समकालीन भाटो चारणों ने दुरसा स भी अधिक समथ ढग से बखाना है।

उत्तम काव्य की विभिन्न विधाओ के श्रेष्ठ सजको की गिनती मे भी दुरसा का नाम कही नही लिया जाता है—

कविते 'अलू' दूहे 'करमाणद , पात 'ईसर' विद्या चौ पूर।
छदे मेहो', झूलणे 'मालो', 'सूर' पदे, गीते 'हरसूर'॥

और भी—

कवित 'रूप', 'नरहरी' छप्पय, 'सूरजमल' के छद।
गहरी झमक 'गणेस' की, रूपक 'हुकमीचद॥

गीता के विषय मे चारण कवियो की आलोचनायें अपने ही ढग की होती थी। जसे गीता के विषय म कही गइ उक्तिया देखिए—

"गीत गीत हुकमीचद कह्यो, हमै गीतडी गावो।"
"हुकमीचद रा हालिया, गुरडवचा जिम गीत"
हुकमीचद तणा कहिया थका, फेरवा गीत महादान फँकै।'
"सकरियै सामोर रा गोळीहदा गीत।"
"गीता गिरवरियौह पीता दारू हद पडै।
पिरथी परवरियौह, सारा कव लोगा सिरै।"

पर, इस प्रकार प्रसिद्ध कवि-उक्तियो मे समाना ही एक मात्र मूल्याकन नही है। अनेक सिद्धहस्त कवियो को भी इस प्रकार का सम्मान नही मिल पाया है।

ऐसी स्थिति म दुरसा आढा को किसी क्षेत्र विशेष मे अतिविशिष्ट नही मानते हुए भी उनका सपूण कृतित्व एक पर्याप्त ऊचे धरातल पर प्रतिष्ठित प्रतीत होता है। इस प्रतिष्ठा और मान्यता के आधार पर्याप्त ठोस हैं। दुरसा की भाषा, उनका पाडित्य, छन्द रचना का कौशल, रूपक खडे करने की अद्भुत प्रतिभा, और इन सबसे ऊपर उनकी ओजपूण उदात्त शैली वण्य विषय का एक दिव्य चित्र प्रस्तुत करने मे समथ हुए है। इन सब काव्योचित गुणो का सम्मिलित प्रभाव ही दुरसा के कृतित्व की सच्ची सफलता है। इस प्रकार का सवतोमुखी सामजस्य विरले ही रचनाकारा म उपलब्ध होता है।

अपनी प्रौढ प्राजल भाषा को 'वयण सगाई' और अन्य अलकारो से सजोकर जब वे विविध रूपका के मनोहारी उद्यान म क्रीडा करवाते हैं तो उनकी प्रतिभा से चमत्कृत होना पडता है। जब वे अत्यत ओजपूण शब्दो और भव्य कल्पनाओ से किसी आदश व्यक्तित्व का चित्र खीचते हैं तो उसका विराट स्वरूप हृदय पर तत्काल एक गहरी छाप छोड देता है। जब वह पाडित्यपूण उक्तिया की एक पर एक शृखलायें सी गूथने लगते हैं और सास्कृतिक सदर्भों का ज्ञानकोश खोल देते है तो उनकी विद्वत्ता और सूझ बूझ के आगे नतमस्तक होना पडता है।

अभिव्यक्ति की यह सर्वांगीणता ही दुरसा के काव्य की प्राण बनी हुई है। इसी सदभ मे चारण कवि के स्वर मे स्वर मिलाकर दुरसा की समथ उक्तियो के लिए उनकी वचनसिद्धता को स्वीकार करना पडता है—

सगत रा पुत्र जाणै कोइक वचनसिद्ध।
उगत री जुगत रा घाट वडा॥

"उक्ति की युक्ति का अतिविकट माग कोई कोई वचनसिद्ध चारण कवि ही जान पाते हैं।"

निस्सदेह दुरसा आढा ऐसे ही वचनसिद्ध शक्तिपुत्र थे।

•

परिशिष्ट

रचनाओ से उद्धरण

विरद छिहत्तरी

सोरठा

वुहा घडेरा वाट, वाट तिवण वहणो विसद।
घाग त्याग खगवाट, पूरो राण प्रतापसी ॥1॥
अक्बर पथर अनक, वे भूपत भेळा किया।
हाथ न लागो हेक, पारम राण प्रतापसी ॥2॥
अक्बर हिये उचाट, रात दिवस लागी रहै।
रजवट बस समराट, पाटप राण प्रतापसी ॥3॥
अक्बर समद अथाह, तिह डूबा हिंदू तुरक।
मवाडो तिण माह, पोयण फूल प्रतापसी ॥4॥
हळदीघाट हरोळ, घमट उतारण अरि घडा।
आरण करण अडोळ, पुहच्यो राण प्रतापसी ॥5॥
थिर नृप हिंदुसथान, लातरगा मन लाभ लग।
माता भूमी मान, पूजे राण प्रतापसी ॥6॥
सेला अणी सिनान, धारातीरथ म धसै।
देण धरम रणदान, पुरट सरीर प्रतापसी ॥7॥
उडै रीठ अणपार, पीठ लगा लाग्रा पिसण।
नठीगार नकार, पठा उदियाचल पता ॥8॥
लघण कर लकाळ, सादूळो भूपा सुव।
कुळवट छोड श्रपाळ, पैंड न देत प्रतापसी ॥9॥
वडो विपत सह वीर, वडो कीत खाटी वसू।
धरम धुरधर धीर, पारग धिनो प्रतापसी ॥10॥
जिण रो जस जग माह, जिणरो जग धिन जीवणो।
नडो अपजस नाह, पणधर धिना प्रतापसी ॥11॥

अकबर जासी आप, दिल्ली पासी दूसरा।
पुनरासी परताप सुजस न जासी सूरमा ॥12॥

किरतार बावनी

छप्पय

1

विसमी ऋतु बरसात, वहै मारग व्यापारी,
सग पहुराइत सोइ, न सूव को नरनारी।
महियल बरस मह, तळं बळि कादव तेतो,
बाज थोठा बाव, अगनि दुख झेला ऐतो ॥
चवप्रहर घडो चित चितव, झडपाणी माथ झर।
करतार पेट दूभर किया, सो काम एह मानव करै ॥

2

ले काध सुखपाल, होइ चाकर पथ हाल,
सास पियारो सहै, घणा घट सकट घालै।
भारी नर न भार धरा चलता पिड धूज,
सीस तणो परसेव, पगा नख सूधो पूज ॥
जीव काम दोहरो जिको, दुख दखता आदर।
करतार पट दूभर किया, सा काम एह मानव करै ॥

3

वस बीच बजार, प्रथम मुखि राम प्रकास,
लावो धरती लोटि, मूठ उर पत्थर मारै।
धोबा भरि भरि धूळ, आख ऊपर ढिग आण,
अति तडक आकर जळ दुख पूरो जाण ॥
तुछ दान नीठ आपै तिको, रगता दिन सारो रळ ।
करतार पेट दूभर किया, सो काम एह मानव कर ॥

4

नवल सुदरी नारि, महा अति रूप मनोहर,
निरखै सामा नत्र नवा लयलीण होय नर।
सोळ सज सिणगारि, सरस तिण दही सोहै
माणस केही मात, दखि सुरनर मन मोहै ॥

एहवी त्रिया मेले अलग, व्यापारी विरहो वरे।
करतार पेट दूभर किया, सो काम एह मानव करै ।।

राजा मानसिंह रा झूलणा

नीसाणी

1

पत्ति दुरगा जेर करि, लख लिद्ध दुरगा।
है घड गै घड लक्ख भड, अूतारि अलगा।
तूझ दळा सिर सावळा, विसराम विहगा।
छत्री घणी पछाडियै, उरि वाढि तुरगा।
वद अरत्या कूर रथा, कासी सिवलिगा।
वूद वरिक्खा तपरिखा, जळ धारा गगा।
रैंण कणा सर आरिजणा, पाहाड सिरिगा।
स्रग्गि सुरा महिअळ नरा, पाताळि भुइगा।
भाम त्रिणा गिरवर वणा, नाखत्र निहगा।
सीत गुणा जत लखमणा, हणवत दवगा।
हंस जळा धण वददळा, सामद तरगा।
मान तुही जीत्या नको, राजा रण जगा।

2

आरति जिम्मी साझतै, दिल्ली सुरताणा।
कूरम हत्थे वाहता, मत्थै केवाणा।
पाडि मसीत प्रासादि कू, आदी तुरकाणा।
छापरि त छू ताणतै, दते मेल्हाणा।
पारि करदो सायरा, पमाल पठाणा।
बीच सवालख हमगिर, पचे नदियाणा।
गगा सायर खीर सुर, सागर रतनाणा।
माण सरोवर, सिंधसर, विधी महिराणा।
घाटा बाटा आघटा, नदिनाळ छिवाणा।
बीच गिरा वड सरवरा, सेवाळ पुराणा।
पीछोला पछिताईआ, तू धरा अर्याणा।
साहण मान न जेरिया, कुल तास निवाणा ।।

गीत मुकुददास मेडतिया रो

रांणा ची चाड राणपुरि रहते,
घत वाघरीयू नव घडे।
कटका पूठि मडत कमधज,
मुकुंद मुकुंद च रिदे मडे ॥
मुकुंददास पहचाडि मरणन्नि,
धूगू लपजता तिणि पाति।
सांकड भीड विच न समाणो
जमल तणा समाणो जोति ॥2॥
मोर मुञ्चू कामि मवाडा,
दळ धामे विहडे दुअण।
तन आपरा न कीधू टाळू,
हरि चा तन भेळा हुअण ॥3॥
मोटा सामि सुछळि मडतियै,
महि मोटा कीधो मरण।
परमेसर भेळो पूजीज,
वकुठवीर वळोधरण ॥4॥

राव अमरसिंघ रा झूलणा

जाणै सोर भडकिया, जामगी नगाडे।
किर नरसिंघ निकासिया, हरि पत्थर फाडे॥
काढे बीजळ कोपियो, हाथळ अूपाडे।
पळवट अूतापा कडे, जमदढ धूराडे॥
हिरणाकुस ज्यू हाथळे, पाडिया पछाडे।
सिंघ अमर नरसिंघ ज्यू बठो ववाडे॥
अूचडिया असुरा सुरा, गयपाग सुहाडे।
जाणे दुरजोधन तणा, भुज भीम भमाडे॥
किर कपि धाम विधूसिया रावस रोसाडे।
किर लका रामण तणा हणवत लगाडे॥

राव अमर दिल्ली दळा, पाधर पोठाडे ।
श्रोठी रावत पोढियो, किर लव कमाडे ॥

गीत

राणा प्रताप री मरसियो

सामो आवियो सुरसाथ सहेतो,
अूच बहा अूदाणा ।
अकबर साह सरस अणमिलिया
राम कहै मिल राणा ॥1॥

प्रमगुर क्है पधारो पातल,
प्राज्ञा करण प्रवाडा ।
हुव सरस जमलिया हिंदू,
मोसू मिल मेवाडा ॥2॥

एक्कार ज रहियो अळगो,
अकबर सरस अनैसो ।
किसन भणै रुद्र ब्रह्म बिचाळै,
बीजा सागण वैसो ॥3॥

गीत राठौड प्रथीराज री "वेलि" री

रुकमणि गुण लखण, रूप गुण रचवण,
वलि तास कुण करे वखाण ।
पाचमो वेद भाखियो पीथल,
पुणिया उगणीसमो पुराण ॥1॥

केवल भगत अथाह क्लावत,
त जु किसन ती गुण तवियो ।
चिहु पाचमो वेद चालवियो,
नवदूणम गति नीगमियो ॥२॥

मैं कहियो हरभगत प्रथीमल,
अगम अगोचर अति अचड ।
व्यास तणा भाखिया समोवड,
ब्रह्मतणा भाखिया वड ॥3॥

मरसियो महाराज रायसिंघ कल्याणमलोत रो

वडो सूर सुदतार रायसिंघ विसरामियो,
विढण कुण कवारी घडा वरसी ।
कूजरा तणी मोहताद करसी कवण,
कवण कोडा तणी मोज करसी ॥1॥

कळहगुर दानगुर हालिया कलाउत,
लाख अूपर कवण वाग लेसी ।
अमा गजराज लख मोलकुण आपसी,
दान कुण रीझ सौलाख देसी ॥2॥

जतहर आभरण सतर घड जीपणा,
बरै कुण घडा दहवाट बाजा ।
दान फौजा तणा कवण गहणा दिय,
रतन रो मोल कुण दिय राजा ॥3॥

हिंदवा छात दोय वात ले हालियो,
बाळग्यो आक जुग चिहू वाने ।
हसत हव हीडता देखसा रायहर,
कोड हव खजान सुणस कान ॥4॥

वीरमदे सोलकी रा दूहा

ईखे अकबर काह वीर अमर चा वागिया ।
काळो केहर कणणियो, हाथी हायळ वाह ॥
झालो झाल भुजेह, वाघ जिही वेढाइतो ।
जडियो तिण वेळा जिरह, वणियो वीरमदेह ॥
दुजण साल तिण दीह, नउ झूसण मावै नही ।
असमर हाथळ जूसे सीह कळोधर सीह ॥

समहर वहते सार, देखे कर दूदावता।
पूतारे पडिहारिया, वीरम वका जुझार ॥
वाके असि बेकाह, सेल वच्छेका साहिया।
गा मात्री वहि माझोए, एके गाहे काह ॥
रीठा वीरमदेह, काळो काळाहण कर।
पासाडे परवत तणे, अरि गा ओला लेह ॥
काळे सू क्विळास, कुमारा गिरवर कीया।
आयो पाधर अजवियै, सुरताणी दळ सास ॥
वाळधमळ विरदत, वीरमदे जिम जिम वधे।
दूजो तिम तिम देखीये, नीमालग नखतेत ॥
वीरम वक्मि सुवाह, नागो लुहडो ही थको।
सपेखे सतोखीया, मात पिता मन माह ॥

गीत अकबर बादसाह रो

वाणावळि लखण क अरजण वाणावळि,
सिरदस रोळण कस सधार।
सासो भाज हुमायु समोभ्रम,
अकवरसाह कवण अवतार ॥1॥

निगम साख मानुख गत काहीं,
असपत कथ साचा जण बार।
वधण भ्रमर क तू झक्वेधण
गिरतारण कै तू गिरतार ॥2॥

जोगी परा करामत जोता,
आदम नही बडो कोई अस।
धूसण धणख क करण विधूसण,
वसरघू कै तू जदुवस ॥3॥

आख दलीस कूण तू इण म,
अनत किना नर प्रगट इहा।
सायर बाधणहार दिलेसर
काळी नाथणहार किहा ॥4॥

कुमार अज्जाजी नो गजगत

खागे पाखणाजी, वस रो वधामणा।
क्थ कोडामणाजी, भारथ भामणा॥
भामणा अपछर लिये भारथ, कियण माल कोडामणा।
जतरूप, डायो, नाग, अणवर, बहादुर बीयामणा॥
आयुध आखा, थाळ जाडण, वसर ढाल वधामणा।
भालोल भळके खगे भाले, पटे गरजे पाखणा॥
गहके ग्रीधणी जी क पळक्ज पखणी।
डहके डेयणी जी, जबुक जोगणी॥
जोगणी जवक प्रेत पळचर, पिसा वधमल पखजी।
नाहराळ वोह मुखाळ निसचर, करक्सा यत काकणी॥
चापक भेख भूत वेतर, दयणी अर डायणी।
वैकुठ गो तन वाग वेचण, ध्रवड देहालाघणी॥

गीत मानसिंघ सकतावत रो हाजीपुर री वेढ रो

मेवाड थका पूरवगढ माल्है,
अईयो सकतहरा उनमान।
जग परदेस जीववा जाव,
मरवा गयो करारो मान॥ ॥1॥

माटीपणा तुहाळो माना,
रहियो घण घणा दिन रोस।
कोस हक मरवा जाव कुण,
क्वळो गयो हजारा कोस॥ 2॥

मानसिंघ धिन धिन मेवाडा,
अत प्रब्र भीम तणो अवसाण।
जोळा हुव घणा नर जीवा,
भेळो हुवो समोभ्रम भाण॥ 3॥

पोह बदियो जहगीर पातसाह,
कहिया धिन राण करण।
ऊगता सूरज जिम ऊगो
मानसिंघ वाळो मरण॥ 4॥

गीत सोलकी रायसिंघ वीरा हमीरोत रो

चितडा चालि रे चालुक र चलणे,
थूड़ै दाळिद थारो।
वडदाता सुणिजै वीराउत
हैमर वगसण हारो ॥ 1 ॥
मो मन रायसीघ मागिवा,
हरख करे दिसि हालै।
एकण मोज हमीर अभिनिमो,
पाता दाळिद पालै ॥ 2 ॥
खागे मारि वटा खळ खेस,
दान सुपात्रा दाखै।
साही माळधणी सोलकी
रासा वडछळ राख ॥ 3 ॥

गीत राणा अमरसिंघ रो

सागण दूसरा अभनमा उदैसी, अमरा अवर अडियो ।
द आसीस तन दसरावो नवरोजै ना वडियो ॥ 1 ॥
चरच चरण तूझ चीतोडा, पुहपमाळ पहराव ।
दासपणो न करै दीवाळी इण तण घर आवै ॥ 2 ॥
पातल रा छळ जाग पतावत, अरसी रा छळ आग ॥
अिळ जसरात जनमिया अमरा जमारात नह जाग ॥ 3 ॥
चित्रागढ हद सोह चाढवा, सोह हमीर सरीखा ।
लाखाहरा नकू लेखवियो, तथ मेल तारीखा ॥ 4 ॥

गीत राणा अमरसिंघ रो

अणदीठा जिके गाविया अधपत, अणदीधा गाया अवर ।
मागू हू इतरा मवाडा, एकण तो तीरे अमर ॥ 1 ॥
गाया म्हैं मागिया पख गुण, गढपति गाभापती गणो ॥
मोटा खत्री द्रवो मेवाडा, राण खत्रिवस तणो रणो ॥ 2 ॥

राव रावत रावळ के राजा, राणाहरै राखिया रिण।
तू हिंदवाण धणी पातलतण, ता गाढा मागजे तिण ॥ 3 ॥

रिण राखियो घणो राजाने, मिलवा न कर मूझ मन।
कर भूरण कूभेण कलोधर, राण अठारह रायहर ॥ 4 ॥

मोह सीलणो किपो सीमोदै, सूर साम ते साखि सुर।
छखिया मुळ लहणो छोडवियां, राण दियतै रायपुर ॥ 5 ॥

राजस्थानी भाषा और साहित्य के लिए समर्पित श्री रावत सारस्वत ने विगत 45 वर्षों मे अनेक महत्त्वपूण काय किये हैं। हजारो प्राचीन राजस्थानी हस्तलिखित ग्रथो के सूचीकरण के अतिरिक्त अनक ग्रथो का सपादन भी आपन किया है। 'मरुवाणी' नामक सुविख्यात मासिक पत्रिका क माध्यम से विगत तीस वर्षों मे आधुनिक राजस्थानी लेखको को प्रोत्साहित करने का श्रेय भी आपको है। आपन राजस्थानी भाषा साहित्य सगम (अकादमी) का सभापतित्व भी किया है और साहित्य अकादमी की राजस्थानी परामर्शदात्री समिति के आप सदस्य रहे हैं।

हस्तलिखित ग्रंथ

1 दुरसा आढ़ा जीवन और साहित्य—डा० लक्ष्मीनारायण कुशवाहा, काशीपुर
(पी एच० डी० उपाधि के लिए आगरा विश्वविद्यालय द्वारा स्वीकृत शोध प्रबंध)
2 डिंगल गीतो के हस्तलिखित ग्रंथ (रावत सारस्वत का संग्रह)
3 दुरसा आढा के ग्रंथो की पाण्डुलिपिया (डा० हीरालाल माहेश्वरी का संग्रह)

रावत सारस्वत

1 डिंगल गीत—रावत सारस्वत—सादूळ राजस्थानी रिसर्च इंस्टीट्यूट, बीकानेर, 1970
2 महादेव पारवती री वेलि—रावत सारस्वत—सा० रा० रि० इ०, बीकानेर, 1970
3 दलपतविलास—रावत सारस्वत—सा० रा० रि० इ०, बीकानेर, 1970
4 मरुवाणी (*मासिक पत्र*)—रावत सारस्वत, (राज० भा० प्र० सभा, जयपुर) वर्ष 4 5 (1959 60)